नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

मासिक समाचारपत्र • वर्ष 6 अंक 1
फरवरी 2004 • तीन रुपये • बारह पृष्ठ

देश में चल रही भूमण्डलीकरण की काली आंधी के बीच

चुनावी मौसम में सरकार खुशनुमा बयार बहाने में जुटी

सम्पादक

लखनऊ। अब यह लगभग तय हो चुका है कि देश में लोकतंत्र का अगला महास्वांग (लोकसभा चुनाव) अप्रैल महीने में होने जा रहा है। इसलिए इस स्वांग में पार्ट अदा करने वाली सभी पार्टियां अपनी-अपनी पटकथा तैयार करने में जोर-शोर से जुट गयी हैं। तरह-तरह के चमकीले-भड़कीले मुखौटे तैयार किये जा रहे हैं, मतदाताओं को लुभाने-रिझाने के लिये नये-नये जुमले उछाले जा रहे हैं। चुनाव जीतने की गरज से इस बार भारतीय जनता पार्टी के उस्ताद दिमागों ने अंग्रेजी के एक जुमले को इधर खूब उछाला है-फील गुड फैक्टर। जब तबियत हरी-हरी सी महसूस होती है, मन को भला-भला सा लगता है तो इसे अंग्रेजी में कहते हैं 'फील गुड'-यानी एक खुशनुमा अहसास। वाजपेयी-आडवाणी समेत केन्द्र सरकार के सभी बोलक्कड़ मंत्री और भाजपा के सभी मीडिया रागी नेता इन दिनों देश की जनता को यही खुशनुमा अहसास दिलाने की कोशिश में जुटे हुए हैं। हमारी गाढ़ी कमाई के करोड़ों रुपये विज्ञापनों में फूंककर हमें यह विश्वास दिलाने की कोशिश की जा रही है कि वाजपेयी के शासनकाल में एक नये भारत का उदय हो रहा है। तरह-तरह के आंकड़े और नज़ीरें देकर साबित किया जा रहा है कि भाजपा गठबंधन सरकार के पिछले पांच सालों में चहुं ओर सुख-समृद्धि और शांति की खुशनुमा बयार बह रही है।

खुशनुमा बयार नहीं काली आंधी

देश की अर्थव्यवस्था की सेहत भली-चंगी दिखाने वाले जिन चमकारी आंकड़ों की गवाही देकर जनता के भीतर खुशनुमा अहसास उड़ेले जा रहे हैं उसके फर्जीवाड़े को उजागर करने के लिए पूंजीवादी अर्थशास्त्र की बारीकियों में जाने की जरूरत नहीं। कोई भी दुरुस्त दिमाग वाला औसत समझ का आदमी आसानी से यह महसूस कर सकता है कि देश मे भूमण्डलीकरण, उदारीकरण, और खुलेपन के नाम पर कोई खुशनुमा बयार नहीं वरन आम जनता की जिंदगी को तबाह-बर्बाद करने वाली काली आंधी चल रही है।

आम जनता की तबाही-बर्बादी का आलम यह है कि एक इंसान बस जिंदा रहने के लिए अपनी बच्ची को सिर्फ दस रुपये में बेच देता है। फ़कत ज़िंदा रहने की कोशिश में लोग आम की जहरीली गुठलियां या जहरीली घास खाकर जिंदगी गंवा दे रहे हैं। शायद ही कोई ऐसा दिन बीतता हो जब गरीबी-बेकारी से तंग आकर पूरे परिवार द्वारा आत्महत्या करने की खबरें सुर्खियां न बनती हों। लेकिन वाजपेयी-आडवाणी एण्ड कम्पनी कह रही है कि फील गुड। गांवों में गरीब किसान पूंजी की मार से जगह-जमीन से उजड़ते जा रहे हैं, रोजी-रोटी की तलाश में भागकर औद्योगिक नगरों में आ रहे हैं मगर यहां भी निजीकरण-छंटनी- तालाबंदी के कोड़े बरस रहे हैं। जिन्हें काम मिल भी गया तो सुबह से शाम तक हड्डियां गलाने-खपाने के बाद सिर्फ उतना ही मिल पा रहा है जितने में बस सांस चलती रह सके। जो पुराने परमानेण्ट मजदूर हैं उनकी भी छुट्टी करने का सिलसिला तेजी से चालू है जिससे अधिक से अधिक काम ठेके पर करवाये जा सकें। कानूनों में फेरबदल कर देशी-विदेशी पूंजीपतियों के हाथ खुले किये जा रहे हैं। लेकिन भाजपा वाले कह रहे हैं फील गुड।

दरअसल पिछले विधानसभा चुनावों में जो कामयाबी मिली है उससे भाजपा वालों की तबियत में जो हराभरापन आया है और केन्द्र सरकार अपने आका देशी-विदेशी पूंजीपतियों और धनिकों की जमातों को करों में राहत और तरह-तरह की जो रियायतें दे रही है उससे यह समूची बिरादरी अच्छा-अच्छा सा महसूस कर रही है। यही अहसास वे जनता को भी महसूस कराना चाहते हैं जिससे भाजपा की झोली वोटों से भर जाये।

अब उन आंकड़ों और दावों की असलियत भी जान ली जाये जिनके बूते वाजपेयी-आडवाणी एण्ड कम्पनी 'फील गुड फैक्टर' की शेखी बघार रही है। विदेशी मुद्रा भण्डार 100 अरब डालर का आंकड़ा पार करने, शेयर बाजार में उछाल और जसवन्त सिंह के मिनी बजट की असलियत क्या हैं?

विदेशी मुद्रा भण्डार की असलियत

विदेशी मुद्रा भण्डार 100 अरब डालर के रिकार्ड स्तर पर पहुंचने का खूब ढोल बजाया जा रहा है। इसकी असलियत यह है कि अंतरराष्ट्रीय वित्त बाजार में ब्याज दरों में भारी कमी के चलते अनिवासी भारतीय भारत के बैंकों में पैसे जमा कर रहे हैं क्योंकि यहां ब्याज दरें तुलनात्मक रूप से ऊंची हैं। इस विशाल राशि के इकट्ठा होने में भी सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र से ज्यादा उन भारतीय कामगारों का हाथ है जो विदेशों में अपनी कमाई को भारत के बैंकों में जमा कर रहे हैं। इस सच्चाई पर भी चर्चा नहीं की जा रही कि इस विदेशी मुद्रा भण्डार का अच्छा-खासा हिस्सा अमेरिका के सरकारी बांडों (प्रतिभूतियों) की खरीद में लगाया जा रहा है जिसका बमुश्किल एक प्रतिशत प्रतिफल ही वापस मिल पाता है। दूसरी सच्चाई यह है कि भारत जैसे देशों के फाजिल विदेशी मुद्रा भण्डार से अमेरिका अपने सरकारी बजट घाटे और व्यापार घाटे की भरपाई करता है जो उसके दुनिया पर दादागिरी जमाने और इराक जैसे युद्धों के खर्चों का बोझ उठाने के काम आता है। एक और सच्चाई पर पर्दा डाल दिया जाता है कि कुल 112 अरब डालर की विदेशी देनदारियां भी चढ़ी हुई हैं। सबसे अहम बात तो यह है कि सरकार इस विशाल विदेशी मुद्रा भण्डार को स्वास्थ्य, शिक्षा और जनता के लिए अन्य सुविधाएं बढ़ाने के लिए निवेश करने नहीं जा रही। कोई आश्चर्य नहीं कि यह पैसा शेयर मार्केट में लगे और शेयर मार्केट का फूलता गुब्बारा और फूलते हुए फील गुड फैक्टर की खुशफहमी को बढ़ाने का ही काम करे।

शेयर बाजार में आयी उछाल का राज

जनता को फील गुड कराने के लिए मुम्बई स्टाक एक्सचेंज का सूचकांक 6000 की संख्या पार कर जाने

(पेज 6 पर जारी)

नयी दुनिया निठल्ले चिन्तन से नहीं, जन महासमर से बनेगी!

डब्ल्यूएसएफ का मुम्बई महातमाशा सम्पन्न

विशेष संवाददाता

मुम्बई। पिछली 16 जनवरी को गाजे-बाजे, ताम-झाम और धूम-धड़ाके के साथ शुरू हुआ विश्व सामाजिक मंच (डब्ल्यू एस एफ) का मुम्बई महातमाशा आखिकार सम्पन्न हो गया। दुनिया के 150 देशों के एक लाख से अधिक लोगों ने इस 'सामाजिक महाकुंभ' में भांति-भांति के विचारों के संगम में डुबकी लगायी। और जो कुछ भी हो, डब्ल्यू एस एफ को इस बात का श्रेय तो देना ही पड़ेगा कि एक ही महाचौपाल में एक दूसरे से छत्तीस का रिश्ता रखने वाले लोग अपनी-अपनी नयी दुनिया बनाने की मुराद लिये छह दिनों तक साथ-साथ रहे, बिना सिरफुटौवल किये। शांतिपूर्ण सहअस्तित्व का ऐसा महानजारा कि लासाल-काउत्स्की-ख्रुश्चेव-देङ सियाओ पिङ के दुनिया भर में फैले हुए वंशजों (इस आयोजन में अहम भूमिका निभाने वाले देशी वंशजों समेत) का मन गदगद हो उठा। खबर है कि अपने-अपने सपनों की नयी दुनिया को मुमकिन बनाने की हसरत सीनों में संजोए आधुनिक उड़नखटोलों से मुम्बई के पंचसितारा होटलों में उतरे डब्ल्यू एस एफ के आला कर्ता-धर्ता छह दिनों के थका देने वाले 'गहन चिन्तन-मनन' के बाद अपने-अपने नेहनीड़ों में वापस लौटने से पहले भारतभूमि के सैरगाहों में बिखर गये हैं-स्कॉच की बोतलों के साथ अपनी थकान मिटाने के वास्ते।

आयोजन के दौरान दबी जुबान से मंच के कई कर्ता-धर्ता लोगों ने कबूल किया कि ज्यादा नहीं सिर्फ 150 करोड़ रुपये आयोजन को कामयाब बनाने में खर्च हुए। यह रकम जुटाने में इस बार इतनी होशियारी जरूर बरती गयी जिससे यह कहा जा सके कि फोर्ड फाउण्डेशन जेसी साम्राज्यवादी फंडिंग एजेंसियों से सीधे पैसा नहीं लिया गया। यानी दांये-बांएं करके लिया गया। यह होशियारी इसलिए क्योंकि दुनिया भर से यह सवाल उठने लगा है कि साम्राज्यवादी फंडिंग एजेंसियों और सरकारों से पैसा लेकर काहे का साम्राज्यवाद विरोध?

आयोजकों की यह सफाई उन्हें पाक-साफ बनाने से ज्यादा यह साबित कर रही थी कि थोड़ा-बहुत नहीं बल्कि पूरी दाल ही काली लगती है। यह सफाई मासूमियत का मुखौटा लगाये चतुर सुजानों को ही सुहायी होगी। कौन नहीं जानता कि तमाम फंडिंग एजेंसियां खुद रकमें मुहैया कराने के ऐसे तरीकों का सहारा लेती हैं जिसे सीधे-सीधे फंडिंग न कहा जा सके। चाहे आयोजन में भागीदार एनजीओ फंडिंग एजेंसियों से रकम लें और वे आयोजन के लिए सहयोग दें या सीधे आयोजन के लिए रकम ली जाये, बात एक ही है। कान घुमाकर पकड़ने वाले तर्क से डब्ल्यूएसएफ के कर्ता-धर्ता अपने साम्राज्यवाद विरोध की चुनरी में लगे दाग को नहीं धो सकते।

तमाम समाचार चैनलों और राष्ट्रीय कहे जाने वाले अखबारों के रिपोर्टर इस महातमाशे की रिपोर्टिंग करने के लिए पसीने-पसीने होते रहे लेकिन फिर भी पूरी तस्वीर उभारने में नाकाम रहे। रिपोर्टिंग करते भी कैसे। जब प्रतिदिन 200 से अधिक कार्यशालाएं, गोष्ठियां, सांस्कृतिक कार्यक्रम, आम सभाएं एक साथ चल रही हो। यानी छह दिनों तक 1200 से अधिक अलग-अलग तरह के

(पेज 9 पर जारी)

आपस की बात

समाज बदल सकता है बशर्ते हम एकजुट हों

यूं तो देश की गरीब मेहनतकश आबादी आजादी के बाद पिछले 56 सालों से लूटी और पीसी जा रही है। पैसे वालों और नेताओं के धंधे गरीबों को लूटकर ही चलते हैं। गरीबों के साथ ठगी का ऐसा ही एक किस्सा हम यहां बयान कर रहे हैं।

हर इंसान की यह मूलभूत आवश्यकता होती है कि उसके सिर छिपाने की एक जगह हो, तन पर कपड़ा हो, लेकिन आजादी के 56 वर्ष के बाद भी इस देश में एक बड़ी आबादी ऐसी रहती है जिनके पास यह भी नहीं हैं। 25-30 सालों से अगर कोई कहीं रह रहा हो तो भी उसे सुन्दरीकरण के नाम पर एक झटके में उजाड़ दिया जायेगा। ऐसे मौकों का फायदा तमाम दलाल और नेता उठाने की ताक में लगे रहते हैं। वे लोगों की गाढ़ी कमाई से पैसे हड़पकर खाली पड़ी नजूल की जगहों पर बसा देते हैं और उनका आशियाना फिर से उजाड़े जाने के लिए तैयार रहता है।

हम लोग भी एक मकान का सपना लेकर ऐसी ही एक नजूल की जमीन पर बस गये हैं। रुद्रपुर (ऊधमसिंह नगर) के भदईपुरा कालोनी की जगह 4 वर्ग मीटर की है। इस जमीन को एक प्रभावशाली व्यक्ति, सुखलाल नेता ने अपने कब्जे में कर लिया था। वह सैकड़ों लोगों को झांसा देकर काफी पैसा बटोरकर स्वर्गवासी हो गया। मरने से पहले उसने इन जमीनों को खतरनाक शैतान सरकार जीत सिंह व दीदार सिंह को बेच गया। उसने गरीब आबादी को झांसा देकर और पैसा वसूल कर यहां बसाना शुरू कर दिया। उसने सैकड़ों लोगों से पैसे वसूले।

यह नयी बस्ती बस तो गयी लेकिन यह नरक का पर्याय बन गयी। न सड़कें हैं न पानी निकासी की व्यवस्था। बारिश में तो और भी बुरा हाल रहता है। ऐसे में ही नगर के प्रभावशाली नेता यहां पहुंच जाते हैं। कोई समझाता है कि तुम लोग तो अवैध रूप से बसे हो, ज्यादा बोलोगे तो सरकार तुम्हें उजाड़ देगी। तभी कोई और आता है और बिजली के खम्भे के नाम पर 100-100 रुपये वसूलता है तो कोई सरकारी योजना से लैट्रीन बनवाने के नाम पर पैसा वसूलता है। ये नेता लोगों की खुशहाली का झूठा सपना दिखाकर और ट्राली भरकर लोगों की भीड़ अपनी रैलियों में ले जाते हैं। एक कमरा बनाने की लालसा में गरीबों का शोषण होता रहता है।

समस्याओं का अन्तहीन चक्र शुरू है। कभी किसी कर्मचारी को पैसा देना है तो कभी नेताओं को खुश करना है और उनकी रैलियों की शोभा बनाता है। अगर ऐसा न किया जाये तो आफत आ जाती है। हमारी बस्ती में ऐसे ही चंदा देने से मना करने पर एक मजदूर भाई धर्मवीर को कुछ लोगों ने सरेआम पीट-पीट कर बेहोश कर दिया और पैसा भी वसूल ले गये। वे धमकी भी दे गये कि आगे से किसी ने विरोध किया तो उसे यहां से उजड़वा दिया जायेगा। हमारे पड़ोस में उत्तरांचल-उत्तर प्रदेश की सीमा पर फाजलपुर महरौला में कुछ दबंग लोगों ने घुसकर गोलियां चलाते हुए दहशत फैलाया और जगह खाली करने के लिए धमकियां दीं। जबर्दस्ती दो लोगों को जीप में डालकर उठा ले गये और अधमरा करके सड़क पर फेंक गये। ऐसे मौकों पर पुलिस भी इन दबंगों के साथ ही होती है।

बिगुल के माध्यम से हम लोगों को इन दलाल नेताओं से सावधान रहने और एकता बनाने का जो संदेश मिला है उससे हमारी स्थिति में थोड़ा बदलाव भी आया है। हम लोगों ने नौजवान भारत सभा की बैठकें शुरू कर दीं और लोगों को जगाना शुरू किया। इतने से ही हमारी बस्ती में अवैध वसूली रुक गयी है। आज इस बात की जरूरत है कि लोगों को एकजुट होना पड़ेगा। मजदूर भाइयों को शोषण करने वालों के खिलाफ जागना है। अगर सभी लोग जाग जाते हैं तो सुधार हो सकता है, समाज बदल सकता है।

-अश्वनी कुमार, रुद्रपुर

अनुराग ट्रस्ट बाल साहित्य प्रकाशन

कंगूरे वाले मकान का रहस्यमय मामला
होल्गर पुक्क 8.00
हिरनौटा दूमित्री मामिन सिदिर्याक
घर की ललक निकोलाई तेलेशोव
बस एक याद लेओनिद अन्द्रेयेव
मदारी अलेक्सान्द्र कुप्रिन
पराए घोंसले में फ्यो. दोस्तोयेव्स्की
सदानन्द की छोटी दुनिया सत्यजित राय
दो साहसिक कहानियाँ होल्गर पुक्क
आम जिन्दगी की मजेदार कहानियाँ होल्गर पुक्क
(सभी 10.00 रुपये)

कोहकाफ का बन्दी तोल्सतोय
गोलू के कारनामे रामबाबू
(दोनों 12.00 रुपये)
लाखी अन्तोन चेखव
बेझिन चरागाह इवान तुर्गनेव
मनमानी के मजे सर्गेई मिखालोव
छत पर फँस गया बिल्ला विताउते जिलिन्सकाइते
(सभी 15.00 रुपये)

प्राप्त करें जनचेतना से

राहुल फाउण्डेशन का नया प्रकाशन

बोल्शेविक पार्टी का इतिहास

यह पुस्तक कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में मजदूर वर्ग द्वारा समाजवाद के लिए सफल संघर्ष और समाजवादी निर्माण के अनुभवों और सबकों का निचोड़ प्रस्तुत करती है। यह पुस्तक हमें सामाजिक विकास के नियमों के ज्ञान से लैस करती है तथा पूँजी और श्रम के बीच जारी विश्व ऐतिहासिक महासमर में समाजवाद की अपरिहार्य विजय में विश्वास पैदा करती है। निम्न-पूंजीवादी पार्टियों-गुटों, सभी प्रकार के अवसरवादियों, आत्मसमर्पणवादियों, जनता के दुश्मनों और पार्टी के भीतर वामपंथी दुस्साहसवाद तथा दक्षिणपंथी अवसरवाद की प्रवृत्तियों के खिलाफ समझौताहीन संघर्ष चलाते हुए तपकर निखरी बोल्शेविक पार्टी का यह इतिहास हर देश के क्रान्तिकारियों के लिए एक प्रकाशस्तम्भ है।

पृ. 360 मूल्य : 80 रुपये

प्रतियों के लिए जनचेतना के केन्द्रों से संपर्क करें

(पते के लिए देखें नीचे)

बिगुल के पाठक साथियों और शुभचिन्तकों से एक अपील

'बिगुल' के पिछले सात वर्षों का सफर तरह–तरह की कठिनाइयों–चुनौतियों से जूझते गुजरा है। इस दौरान अनेक नये हमसफर हमारी टीम से जुड़े हैं और पाठक–साथियों का दायरा भी काफी बढ़ा है। कहने की जरूरत नहीं कि अब तक का कठिन सफर हम अपने हमसफरों और शुभचिन्तकों के संग–साथ के दम पर ही पूरा कर सके हैं। हालात संकेत दे रहे हैं कि आगे का सफर और अधिक कठिन और चुनौती भरा ही नहीं बल्कि जोखिमभरा भी होगा। हमें विश्वास है कि हम अपने दृढ़संकल्प और हमसफर दोस्तों की एकजुटता के दम पर आगे ही बढ़ते रहेंगे।

'बिगुल' अपने पुरअसर तेवर और अपने विशिष्ट जुझारू अंदाज के साथ आपके पास नियमित पहुंचता रहे, इसके लिए अखबार के आर्थिक पहलू को और अधिक पुख्ता बनाना जरूरी है। जाहिर है कि यह अपने संगी–साथियों और शुभचिन्तकों की मदद के बिना मुमकिन नहीं। हमारी आपसे पुरजोर अपील है कि :

- **बिगुल के स्थायी कोष के लिए अधिकतम संभव आर्थिक सहयोग भेजें।**
- **जिन साथियों की सदस्यता समाप्त हो चुकी है वे यथाशीघ्र नवीनीकरण करा लें।**
- **बिगुल के नये सदस्य बनायें।**
- **बिगुल के वितरण को और व्यापक बनाने में सहयोग करें।**
- **कुछ वितरक साथियों के पास बिगुल के कई अंकों की राशि बकाया है। इसे यथाशीघ्र भेजकर बिगुल नियमित प्राप्त करना सुनिश्चित कर लें।**

सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से सम्पादकीय कार्यालय के पते पर भेजें। बैंक ड्राफ्ट 'बिगुल' के नाम से भेजें।

–सम्पादक

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मजदूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मजदूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच–समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी–चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी–अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल

सम्पादकीय कार्यालय : 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006
सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ
दिल्ली सम्पर्क : 29, यू.एन.आई. अपार्टमेण्ट, जीएच-2, सेक्टर-11, वसुंधरा-गाजियाबाद-201010
ईमेल : bigulakhbar@hotmail.com

मूल्यः एक प्रति-रु. 3/- वार्षिक-रु. 40.00 (डाक खर्च सहित)

बिगुल

'जनचेतना' की सभी शाखाओं पर उपलब्ध :

1. डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020
2. जनचेतना स्टाल, काफी हाउस बिल्डिंग, हजरतगंज, लखनऊ (शाम 5 से 8 बजे तक)
3. जाफरा बाजार, गोरखपुर-273001
4. 989, पुराना कटरा, यूनिवर्सिटी रोड, मनमोहन पार्क, इलाहाबाद
5. जनचेतना सचल स्टाल (ठेला) चौड़ा मोड़, नोएडा (शाम 5 से 8)

मेहनतकश साथियों के लिए जरूरी कुछ पुस्तकें

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन और उसका ढांचा -लेनिन 5/-
मकड़ा और मक्खी -विल्हेल्म लीब्कनेख्त 3/-
ट्रेड यूनियन काम के जनवादी तरीके -सर्जी रोस्तोवस्की 3/-
अनवश्वर है सर्वहारा संघर्षों की अग्निशिखाएं 10/-
समाजवाद की समस्याएं, पूंजीवादी पुनर्स्थापना और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति 12/-
क्यों माओवाद? 10/-
बुर्जुआ वर्ग पर सर्वतोमुखी अधिनायकत्व लागू करने के बारे में 5/-
मई दिवस का इतिहास 5/-
अक्टूबर क्रान्ति की मशाल 12/-
पेरिस कम्यून की अमर कहानी 10/-

बिगुल विक्रेता साथी से मांगें या इस पते पर 17 रु. रजिस्ट्री शुल्क जोड़कर मनीआर्डर भेजें: जनचेतना, डी-68, निराला नगर, लखनऊ।

आपस की बात

नोएडा की झुग्गी बस्ती की एक तसवीर

मैं नोएडा, सेक्टर-8 की झुग्गी बस्ती में रहता हूं। बस्ती के दक्षिण-पश्चिमी कोने में मेरी झुग्गी है। इस बस्ती में रहना धरती पर ही नर्क भोगने जैसा है। यहां इतनी ज्यादा समस्याएं हैं कि अगर किसी को एक सबसे महत्वपूर्ण और बुनियादी समस्या बताने को कहा जाये तो वह असमंजस में पड़ जायेगा। सुबह से शाम तक हर आदमी इस बस्ती में समस्याओं से ही दो-चार होते हुए जीता है।

पानी की समस्या यहां की सबसे गंभीर समस्याओं में एक है। बस्ती की दक्षिणी सड़क पर गिनती में चार हैंडपंप हैं, जिनमें दो तो हमेशा ही खराब रहते हैं। बाकी बचे दो हैंडपंपों पर बस्ती के 1,000 से भी ज्यादा लोग पानी की अपनी जरूरतों के लिये आश्रित हैं। इन हैंडपंपों से पानी भी इतना धीरे-धीरे गिरता है कि पूछिये ही मत।

दक्षिण-पश्चिमी कोने के हैंडपंप, जिसपर मैं भी पानी भरता हूं, पर पांच सौ से भी ज्यादा लोग पानी भरते हैं। लिहाजा यह सुबह 4.30 से रात 10.30 तक व्यस्त रहता है। भीड़ इतनी रहती है कि शायद ही कभी आपको बगैर आधा घंटा लाइन लगाये पानी मिले। ऐसी स्थिति में, जरा उस आदमी की कल्पना करिये जो एक बार आधा घंटा लाइन लगाकर नहाने के लिये एक बाल्टी पानी ले लेता है और उस एक बाल्टी पानी में पूरा न नहा पाने पर दूसरी बाल्टी के लिये फिर उसे नंगे-भीगे बदन ठिठुरती सर्दी में आधा घंटा लाइन लगाना पड़ता है। बहुत सारे लोग तो इसी वजह से नहाते भी नहीं है। इतनी भीड़ के बाद कोढ़ में खाज यह कि यह चलने में भारी भी हद से ज्यादा है। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि एक दिन एक हट्टा-कट्टा नौजवान, जिसकी बांहों की मछलियां अंधेरे में भी साफ दिखाई पड़ती थीं, जल्दी पानी भरने के चक्कर में अपनी पूरी ताकत से हैंडपंप चला रहा था और वह 25-30 लीटर की बाल्टी भरने में ही हांफ गया। बूढ़े और बच्चे तो इसे हाथों से चला ही नहीं सकते, वे कमर या पेट से जोर लगाकर ही पानी भर पाते हैं।

पानी की किल्लत की वजह से लोगों में पानी के लिये हमेशा अफरातफरी मची रहती है। ऐसा लगता है कि लोग किसी ऐसे उजाड़ टापू पर पहुंच गये हैं, जहां उन्हें एक दिन के लिये पानी मिला है, और पानी उन्हें चाहे जहां से, जैसे भी मिले अधिक से अधिक भर लेना चाहते हैं। पानी के लिये लोगों की लोलुपता का अंदाजा इस एक दृश्य से लगाया जा सकता है। सेक्टर-8 के दक्षिण वाली मुख्य सड़क पर दो फीट चौड़ा और एक फीट गहरा गड्ढा हो गया था जिससे पानी लगातार निकल रहा था। और लोग बर्तन मांजने, कपड़ा धोने-नहाने के लिये यहां भी पहुंच गये थे। उस गड्ढे को चारो तरफ से लोगों ने मधुमक्खी के छत्ते की तरह घेर लिया था।

सामान्य तौर पर यहां 11 बजे दिन से शाम 4 बजे तक ज्यादातर हैंडपंप लॉक्ड (तालाबंद) रहते हैं। उनमें ताला इसलिये लगा दिया जाता है कि बच्चे ज्यादा घिचिर-पिचिर करेंगे तो जल्दी ही टूटेगा और बनवाने के लिये फिर से चंदा इकट्ठा करना पड़ेगा।

पानी इतना ज्यादा खारा है कि हमेशा पीलापन लिये रहता है। कभी-कभी तो घंटे भर में ही मटमैला रंग हो जाता है। पानी की गड़बड़ी के बारे में तो कुछ कहना ही बेकार है। दावा किया जा सकता है कि इस बस्ती में शायद ही कोई ऐसा मिले जो पेट का रोगी न हो। कपड़े, पानी रखने के बर्तन सब पीले पड़ जाते हैं।

यहां के लोगों की दिनचर्या बहुत कुछ पानी भरने के समय से तय होती है। रोज सुबह चार बजे, चाहे जाड़ा हो या गर्मी, किसी झुग्गी के दरवाजे के चरचराकर खुलने की आवाज सवेरे की निस्तब्धता को भंग करती है और एक आदमी दबे पांव, चोरों की तरह बाल्टी लेकर हैंडपंप की ओर बढ़ जाता है। लोग ज्यादा पानी भरने और भीड़-भाड़ से बचने के लिये सवेरे-सवेरे ऐसे चुपचाप जाते हैं पर चाहे कितना भी सवेरे जायें, पता चलता है कि आपकी सारी कवायद बेकार गयी और हैंडपंप पर बीस-पच्चीस बाल्टियां पहले से ही रखी आपको मुंह चिढ़ा रही हैं। पौ फटने के बाद तो पूरी रेलमपेल मच जाती है, जगह-जगह से अश्लील भोजपुरिया गीत पटाखों की तरह बजने लगते हैं। इसके अलावा, एक तरफर शेरा वाली मां तो दूसरी तरफ अल्लाहो अकबर। कुल मिलाकर मेले जैसी स्थिति हो जाती है और पानी भरना देवी दर्शन जैसा कठिन।

मांग और पूर्ति के बीच एकरूपता न होने से पानी के लिये रोज नये प्रयास, पानी भरने के नये तरीके, रोज-रोज नयी-नयी घटनाओं को जन्म देते हैं। इस हफ्ते की कुछ घटनायें बयान कर रहा हूं।

रविवार के दिन हैंडपंप पर अतिरिक्त भीड़ रहती है। रोज नहाने वाले, हफ्ते-पंद्रह दिन में नहाने वाले, बर्त्तन-कपड़ा साफ करने वाले लोगों का जमावड़ा हो जाता है। इसमें बच्चे, बूढ़े, औरतें, नौजवान सभी रहते हैं। इस रविवार को कई दिनों के बाद खिली-खिली धूप भी निकली थी और वैसे भी रविवार होने की वजह से लोग फुर्सत में हफ्तों की मैल उसी दिन छुड़ा लेना चाहते थे। अचानक रोज-रोज अपने आप लगने वाली कतार का सब्र टूट गया और स्थिति मार-पीट में बदल गयी। झगड़े की मुख्य वजह यह थी कि एक नौजवान ने कुल्ला करने और बाल्टी खंगालने में कुछ ज्यादा ही समय लगा दिया। हालांकि, झगड़ा पड़ने की युवक की झल्लाहट के पीछे लैट्रिन जाने के लिये डिब्बी भरने वालों की बड़ी संख्या भी एक कारण था।

उस दिन मैं सुबह 11 बजे के आस-पास पानी भरने गया। यह देखकर मुझे कुछ राहत मिली कि केवल चार-पांच बाल्टियां ही लाइन में लगी हैं। एक तो चबूतरे के आधे हिस्से पर कचरा निकालकर ऐसे ही छोड़ दिया गया था, दूसरे सुबह से ही लगातार हल्की बूंदाबांदी हो रही थी। पूरी सड़क कचरे से पट गयी थी। हैंडपंप के एक ओर एक नौजवान दो पतीलियां मांज रहा था तो दूसरी ओर एक औरत कपड़े खंगालने में लगी थी। एक औरत पानी भर रही थी और तीन लाइन में खड़ी अपनी बारी का इंतजार कर रही थीं। मैं भी बाल्टी लाइन में लगाकर इंतजार करने लगा। तभी एक दुबली-पतली, गोरी-चिट्टी सी, अधेड़ उम्र की औरत तेज-तेज चलती हुई आयी; वह बड़ी जल्दी में लग रही थी। आते ही उसने पहले से पानी भर रही औरत को लगभग डांटकर पीछे हटने को कहा। वह थोड़ा पीछे हट गयी, फिर भी हत्थे के करीब ही थी। इस पर उस लोटे वाली औरत ने अपनी त्यौरियां चढ़ा ली और हिकारत से देखते हुए और भी ज्यादा रुखाई से "और पीछे" हटने को कहा। ऊपर से तुर्रा यह कि लगे हाथों ये भी पूछ लिया कि -"तू छूआछूत वाली जात की तो नहीं है?" फिर उसने तमाम कर्मकांड करके ही पानी भरा। पहले तो उसने लोटे को धोया, हैण्डल (हत्थे) को धोया और फिर हैंडपंप के मुंह को धोकर ही पानी भरा। जाते हुए वह बड़बड़ा रही थी कि मुझे तो भगवान को चढ़ाने के लिये जल चाहिये और ये नीच पानी पीने के लिये मरे जा रहे हैं। इस पर एक औरत सलाह देने के अंदाज में बोली, "यह काम तो आपको सबेरे करना चाहिये, दिन भर पता नहीं, कैसे-कैसे जात-कुजात हैंडपंप छूते रहते हैं।"

एक दिन सुबह सात बजे सड़क पर सांड़ों की घुड़दौड़ मची थी। कई नौजवान लड़ाई में सांड़ों को हांक-हांककर उत्तेजित करने में लगे थे। पूरा मेला लग गया था, लोग छतों पर, सड़क के किनारे, गलियों में अटे थे। और बड़ी दिलचस्पी से लड़ाई देख रहे थे। सांड़ों की लड़ाई भयानक थी, वे जिधर ही घूमते, उधर मैदान साफ हो जाता। लोग सड़क से भागकर गलियों में घुस जाते। इतनी अफरातफरी के बाद भी, पानी के लिये लाइन में खड़े लोग, अभी तक वहीं जमे थे। एक औरत पानी भरकर ले जा रही थी तभी भागते हुए एक लड़के से टकराकर उसके हाथ से बाल्टी छूट कर नीचे गिर गयी। इस पर उस औरत ने जोर-जोर से चिल्लाकर-चिल्लाकर आसमान सिर पर ऐसे उठा लिया जैसे एक बाल्टी पानी नहीं दूध बिखर गया हो।

ये नित्य नयी घटनायें झुग्गी-वासियों की रोजमर्रा की जिंदगी का एक हिस्सा हो गयी हैं और उन्हें जीने के लिये इस तरह की जद्दोजहद तो रोज सुबह से शाम तक करनी ही पड़ती है।

-रामकिसुन, नोएडा

इधर कुआं उधर खाई

मैं कंट्रोल एंड स्विचगियर कम्पनी (प्लाट नं. ए-7 और 8 से 8, नोएडा -में एक परमानेंट मजदूर हूं। मुझे इस कम्पनी में हड्डियां गलाते हुए 10 साल हो गये। मुझे केवल 2500 रु. मिलते हैं। सरकार की तरफ से जो डी.ए. मिलता था वह भी कम्पनी ने देना बंद कर दिया है। मजदूर कैजुअल हो या परमानेंट यह डी.ए. सभी के लिए होता है पर कम्पनी उसे हमें देती ही नहीं। काम करने की दशा यह है कि हम सुबह 9 बजे यहां घुसते हैं और रात 10-11 बजे घर जाते हैं। सारा दिन प्रोडक्शन का भूत सवार रहता है। अगर एक-दो मिनट थोड़ी थकान दूर करने के लिए सुस्ताने लगें तो फौरन गेट पर खड़ा करने की धमकी मिलती है। दिमाग हर वक्त टेंशन में रहता है। क्या करें, क्या न करें। 2500 रु. में कैसे जी रहा हूं मुझे ही पता है। मेरे तीन बच्चे हैं। कमरे का किराया 100 रु. है। 500-600 रु. राशन का खर्च आता है। फिर हारी-बीमारी भी है। मैं उत्तरांचल का हूं। घर जाता हूं तो 400 रु. के आसपास किराया लगता है। लिहाजा घर जाना अब सपना हो गया है। कभी सोचता हूं ऐसी हालत में अब तो नौकरी छोड़नी ही होगी। इससे अच्छा तो खेती ही कर लूंगा। लेकिन तभी ख्याल आता है कि खेती भी तो हमारी राम भरोसे है। इतनी जमीन भी तो नहीं है। आखिर वहां भी क्या कर पाऊंगा? जिन्दगी तो वहां भी अंधेरे में ही रहेगी। मेरे लिए इधर कुआं उधर खाई की स्थिति है।

हमारी कम्पनी में यूनियन भी थी। बहुत ही जबर्दस्त हड़ताल होती थी। अपने हक के लिए लड़ने का बहुत उत्साह था। कम्पनी की 8-9 यूनिटें हैं। चार यूनिटों में एक साथ हड़ताल थी। जिसमें फेज-2 की कम्पनी भी आती थी। वहां के मजदूर काम पर लौट गये। मालिक ने यहां मजदूरों को काम से बाहर निकालने की धमकी दे दी। और 70-80 मजदूरों को निकाल भी दिया। बस फिर तो स्थिति खराब होती चली गयी। हमारी यूनियन का रिकार्ड था कि वह कभी मालिक से हारी नहीं थी। अब की बार कुछ मजदूरों की गद्दारी के कारण हार गई। लेकिन हम तो हड़ताल के लिए अब भी तैयार हैं। हड़ताल चाहे 6 महीने चल जाये। अपने हक के लिए उतने ही उत्साह से लड़ेंगे, जितने पहले लड़ते थे। लेकिन हमारे साथ अच्छा और ईमानदार नेता होना चाहिए।

-एक बिगुल पाठक

राहुल फाउण्डेशन की नई किताबें

1. गोथा कार्यक्रम की आलोचना	कार्ल मार्क्स	10.00
2. क्या करें?	लेनिन	30.00
3. वामपंथी कम्युनिज्म एक बचकाना मर्ज	लेनिन	15.00
4. सर्वहारा क्रान्ति और गद्दार काउत्स्की	लेनिन	15.00
5. जनता के बीच पार्टी का काम	लेनिन	30.00
6. धर्म के बारे में	लेनिन	20.00
7. समाजवाद वैज्ञानिक तथा काल्पनिक	एंगेल्स	12.00
8. लेनिनवाद के मूलभूत सिद्धान्त	स्तालिन	15.00
9. माओ त्से-तुङ की रचनाएँ : प्रतिनिधि चयन (एक खण्ड में)		70.00
10. कम्युनिस्ट जीवनशैली और कार्यशैली के बारे में	माओ त्से-तुङ	40.00
11. सोवियत अर्थशास्त्र की आलोचना	माओ त्से-तुङ	35.00
12. महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति : चुने हुए दस्तावेज और लेख (खण्ड 1)		35.00
13. इतिहास ने जब करवट बदली	विलियम हिण्टन	20.00
14. डब्ल्यूएसएफ : साम्राज्यवाद का नया ट्रोजन हार्स	(संकलन)	50.00

परिकल्पना प्रकाशन की नई प्रस्तुतियां

1. दोन की कहानियाँ	शोलोखोव	35.00
2. दुश्मन (नाटक)	मक्सिम गोर्की	35.00
3. एक तयशुदा मौत (उपन्यास)	मोहित राय	25.00
4. चम्पा और अन्य कहानियाँ	मदन मोहन	35.00
5. षड्यंत्ररत मृतात्माओं के बीच (साम्प्रदायिकता पर लेख)	कात्यायनी	25.00
6. राख अँधेरे की बारिश में (कविताएं)	कात्यायनी	15.00
7. इस रात्रि श्यामला बेला में	सत्यव्रत	30.00
8. इन्तिफादा : फलस्तीनी कविताएं	अनु. रामकृष्ण पाण्डेय	30.00
9. क्रान्तिकारी कार्यक्रम का मसविदा	भगतसिंह	5.00
10. मैं नास्तिक क्यों हूं और 'ड्रीमलैण्ड' की भूमिका	भगतसिंह	5.00
11. बम का दर्शन और अदालत में बयान	भगतसिंह	5.00
12. जाति-धर्म के झगड़े छोड़ो, सही लड़ाई से नाता जोड़ो	भगतसिंह	5.00
13. भगतसिंह ने कहा... (चुने हुए उद्धरण)	भगतसिंह	5.00
14. नौजवानों से दो बातें	पीटर क्रोपोटकिन	5.00

निजीकरण के खिलाफ उत्तरांचल के विद्युत कर्मियों-अधिकारियों के संयुक्त संघर्ष का ऐलान

बिगुल संवाददाता

उत्तरांचल सरकार द्वारा राज्य के विद्युत विभाग का निजीकरण करने की कोशिशों के खिलाफ प्रदेश भर के विद्युत अभियन्ता एवं कर्मचारी एक बार फिर लामबंद हो गये हैं। विभाग की ज्यादातर यूनियनों ने संघर्ष का एक साझा मंच-''उत्तरांचल विद्युत कर्मचारी-अधिकारी संयुक्त संघर्ष समिति' बनाकर 9 फरवरी 2004 से चरणबद्ध संघर्ष की घोषणा कर दी है।

समिति ने अपने छह सूत्री मांग पत्रक के तहत उत्तरांचल पावर कारपोरेशन का विघटन/कम्पनीकरण तथा उत्तरांचल जल विद्युत निगम का निजीकरण रोकने, दोनों निगमों में पहले हुए समझौतों को लागू करने, संयुक्त प्रबन्ध समितियों को मजबूत बनाने व जे.एम.सी. की सिफारिशों पर कार्रवाई करने, जी.पी.एफ.ट्रस्ट में 200 करोड़ रुपये जमा कराने, रिटायरमेंट की उम्र 60 वर्ष करने व सभी कैटेगरी का राज्य स्तरीय कॉमन कैडर बनाकर पांच पदोन्नतियां देने की मांग की है।

चरणबद्ध आंदोलन के तहत समिति ने 9 फरवरी, 2004 को राज्य के सभी मण्डलों/खण्ड मुख्यालयों पर मशाल जुलूस निकालकर प्रदर्शन करने, 24 फरवरी को रैली व विधान सभा पर प्रदर्शन और उसी दिन हड़ताल की घोषणा का आह्वान किया है।

दरअसल, उदारीकरण के इस दौर में विभिन्न विभागों में निजीकरण की जो आंधी पूरे देश के पैमाने पर चल रही है, उसकी चपेट में विद्युत विभाग भी आ चुका है। पूरे देश के विभिन्न राज्यों में विद्युत परिषदों को तोड़कर निगम बनाने, फिर इन निगमों को भी उत्पादन, वितरण, व पारेषण (ट्रांसमिशन) के रूप में तोड़ने, किस्तों में उन्हें निजी हाथों में देने की प्रक्रिया लगातार चल रही है। दिल्ली विद्युत वितरण का निजीकरण हो चुका है। उत्तर प्रदेश में भी कुछ-कुछ हिस्से निजी हाथों में सौंपे जा चुके हैं और वहां रिलायंस, बिड़ला आदि का कब्जा भी होने लगा है। जगह-जगह विद्युत नियामक आयोग गठित हो चुके हैं।

उत्तर प्रदेश से अलग होने के बाद उत्तरांचल में भी विद्युत परिषद को निगम में तब्दील करके पॉवर कारपोरेशन व उत्पादन निगम के रूप में उसके दो हिस्से किये जा चुके हैं। अब विद्युत अधिनियम-2003 के तहत विद्युत वितरण के लिए अलग कम्पनी बनाने की प्रक्रिया भी लगभग पूरी हो चुकी हैं। इसके लिए 9 जून तक की समय सीमा भी निर्धारित हो चुकी है। इसके साथ ही उत्तरांचल पॉवर कारपोरेशन लिमिटेड भी दो हिस्से में टूट जायेगा। फिर छोटे टुकड़ों का निजीकरण आसान होगा।

वैसे विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में अति मुनाफे वाले उत्तरांचल राज्य की कई महत्वपूर्ण जल विद्युत परियोजनाएं देशी व बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को सौंपी भी जा चुकी हैं और यह प्रक्रिया लगातार जारी है। यही नहीं, राज्य में नई विद्युत लाइनों व नये ट्रांसफार्मर आदि बैठाने का काम भी अब निजी कम्पनियों को सौंपा जा रहा है। यही कम्पनियां लगाये गये नये ट्रांसफार्मर क्षेत्र में मेंटेनेंस व पैसा वसूली का काम भी करेंगी।

अस्तित्व के ऐसे संकट के दौर में विभिन्न खण्डों में बंटी यूनियनों की एक साझा संघर्ष के लिए आगे आना एक स्वागत योग्य कदम है। होना तो यह चाहिए था कि विद्युत विभाग के निजीकरण के खिलाफ एक बैनर तले देश भर के विद्युत कर्मियों का एकजुट संघर्ष चलता। यही नहीं, चूंकि निजीकरण की यह बयार पूरे देश में चल रही है, लिहाजा पूरे देश के पैमाने पर मजदूरों-कर्मचारियों को सरकारी-निजी, संगठित-असंगठित व अलग-अलग विभागों-सेक्टरों के बंटवारे की दीवारों को तोड़कर तैयारी के साथ संघर्ष के लिए उतरना चाहिए।

लेकिन निजी स्वार्थों में लिप्त मठाधीश ट्रेड यूनियन नेताओं ने बंटवारे की इतनी दीवारें खड़ी कर रखी है और संघर्ष की धार को इस कदर कुंद कर रखा है कि वास्तविक आंदोलन पीछे छूट गया है। इन नेताओं की बार-बार की गद्दारियों ने मजदूर आंदोलन की कमर तोड़कर रख दी है। जाहिरा तौर पर इस परिस्थिति से ही हड़ताल पर प्रतिबंध लगाने, लम्बे संघर्षों के दौरान प्राप्त अधिकारों को छीनने, निजीकरण-छंटनी-तालाबंदी का दौर चलाने के लिए लुटेरों की सरपरस्त सरकारों और उनके अंगों-उपांगों को उचित अवसर मिला है।

केवल विद्युत विभाग को ही देखें तो उत्तर प्रदेश में 67 यूनियनें हैं और छोटे से उत्तरांचल में एक दर्जन से ज्यादा यूनियनें कार्यरत हैं। ऐसे में साझे संघर्ष की यह एक नयी शुरुआत मजदूरों में एक नयी ऊर्जा का संचार कर सकती है, बशर्ते कि नेतृत्व ईमानदारी और सच्ची भावना से संघर्ष की रणनीति पर अमल करे। इसके साथ ही उन्हें अपने इस आंदोलन को अन्य क्षेत्र के मजदूर आंदोलनों के साथ जोड़ते हुए इसे जनान्दोलन बनाने का भी प्रयास करना होगा।

मालिक लोग आते हैं, जाते है
कभी नीला कुर्ता पहनकर, कभी सफेद, कभी हरा
तो कभी लाल कुर्ता पहनकर।
महान है मालिक लोग
पहले पांच साल पर आते थे
पर अब तो और भी जल्दी-जल्दी आते हैं
हमारे द्वार पर याचक बनकर।
मालिक लोग चले जाते हैं
तुम वहीं के वहीं रह जाते हो
आश्वासनों की अफीम चाटते
किस्मत का रोना रोते; धरम-करम के भरम में जीते।
आगे बढ़ो! मालिकों के रंग-बिरंगे कुर्तों को नोचकर
उन्हें नंगा करो।
तभी तुम उनकी असलियत जान सकोगे।
तभी तुम्हें इस मायाजाल से मुक्ति मिलेगी।
तभी तुम्हें दिखाई देगा अपनी मुक्ति का रास्ता।

फिर चुनाव?
क्या अब भी कोई उम्मीद
बाकी बची है?
रोज-रोज तुम अपनी ही
कब्र खोदते रहोगे
तो इस जालिम हुकूमत की
कब्र कौन खोदेगा?
कौन सी राह?
इलेक्शन या इंकलाब?

पुलिसिया दरिंदगी की एक और मिसाल बना सुल्तानपुर पट्टी

बिगुल संवाददाता

रुद्रपुर (ऊधमसिंह नगर)। आजाद मुल्क और नवोदित उत्तरांचल राज्य के इतिहास में पुलिसिया दमन का एक और काला अध्याय जुड़ गया। ऊधमसिंह नगर के बरा गांव में खाकी वर्दीधारी सरकारी गुण्डा फोर्स (पुलिस) की दरिंदगी को अभी पांच माह ही गुजरे थे कि जिले की गांधी कालोनी (सुल्तानपुर पट्टी) में पुलिसिया ताण्डव की एक और घटना सामने आयी। अभी भी पूरा इलाका खौफजदा है। अफसरों का यहां जमावड़ा लग गया। और फिर शुरू हुआ तबाही का वह मंजर जिसके सामने अंग्रेजों की बर्बरता भी फीकी पड़ जाये। इससे मची भगदड़ में 60 साल की एक वृद्ध महिला की मौके पर ही मौत हो गयी। सैकड़ों घायल हुए और सामानों को नष्ट करने और लूटपाट के मंजर ने पूरे इलाके को चीखों-कराहों के साथ वीरानगी में बदल दिया। भयभीत तमाम लोग गांव से ही पलायन कर गये हैं। उधर विभिन्न खतरनाक धाराओं में 75 नामजदों सहित 200 लोगों पर मुकदमे कायम हुए और 10 लोगों पर रासुका ठोंक दिया गया।

पुलिस चौकी फूंकने वालों पर तो रासुका ठोंका पर पूरे इलाके को रौंदने वाले सरकारी गुण्डों को सजा कौन देगा

28 जनवरी को जिस वक्त 'गुड फील' में मदहोश देश के प्रधानमंत्री प्रदेश की राजधानी देहरादून में चुनावी तोहफों की बौछार कर रहे थे, ठीक उसी वक्त राज्य के इस दूसरे हिस्से में पुलिसिया बूटों, लाठियों-संगीनों की धमक के बीच बेबस जनता की चीखों से पूरा क्षेत्र गूंज रहा था। औरतों-बूढ़ों-बच्चों तक की बेरहमी से पिटाई हो रही थी, घर के सामानों को रौंदा-कुचला जा रहा था और भयानक लूटपाट मची हुई थी। खाकी वर्दीधारियों द्वारा यह सारा कुकृत्य जिलाधिकारी और वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक के सीधे दिशा-निर्देशन में चल रहा था।

26 जनवरी की रात में सुल्तानपुर पट्टी में छेड़खानी की घटना को स्थानीय पुलिस चौकी द्वारा लीपापोती करने और अभियुक्तों के छुट्टा घूमने से लोगों में पुलिस के प्रति गुस्सा पनप रहा था। गुस्साये ग्रामीणों ने अगले दिन खटीमा-पानीपत राष्ट्रीय राजमार्ग पर सात घण्टे तक जाम लगाये रखा तब कहीं पुलिस ने मामले की रिपोर्ट दर्ज की। इसमें भी पुलिस ने चार अभियुक्तों में से दो मुख्य अभियुक्तों के खिलाफ कोई मामला दर्ज नहीं किया, क्योंकि अभियुक्त प्रभावशाली थे।

'उत्तरांचल पुलिस आपकी मित्र' लिखने वाले खाकी वर्दीधारियों के प्रति लोगों में नफरत और गुस्सा भीतर-भीतर सुलगता रहा है। इससे पहले भी पुलिस यहां की तमाम घटनाओं को ऐसे ही निपटाती रही है, अपराधियों को शह देती रही है और तमाम बेगुनाह गरीबों पर रोब गालिब करती रही है। लीपा-पोती की इस घटना ने आग में घी का काम किया। गुस्साये सैकड़ों लोगों की भीड़ ने जाकर पुलिस चौकी को घेर लिया। भीड़ देखकर पुलिस वाले चौकी छोड़कर भाग गये। गुस्सायी भीड़ ने चौकी को खाली पाकर अपना पूरा गुस्सा खाली चौकी पर उतार दिया, वहां तोड़-फोड़ की और आग लगा दिया।

फिर क्या था? घण्टे भर के भीतर तीन थानों की पुलिस फोर्स, रैपिड ऐक्शन फोर्स और पीएसी की बटालियन सुल्तानपुर पट्टी पहुंच गयी। डीएम, एसएसपी सहित पूरे जिले के आला

सवाल यह उठता है कि आखिर यह नौबत ही क्यों आयी कि पूरी एक भीड़ को पुलिस चौकी पर हमला करना पड़ा। और फिर, क्या पुलिसिया दरिन्दगी की यह पहली घटना है? क्या बेगुनाहों को फंसाने, अपराधियों को संरक्षण देने, गरीब आबादी को लूटने व थैलीशाहों के सामने दुम हिलाने का काम पुलिस नहीं करती है?

महज ऊधमसिंह नगर जिले में पांच माह पूर्व किच्छा थाने के बरा चौकी की पुलिस ने एक अर्धविक्षिप्त व्यक्ति को पेड़ पर लटकाकर ऐसी पिटाई कि उसकी मौके पर ही मौत हो गयी। डेढ़ वर्ष पूर्व पुलिस चार मजदूर नौजवानों को उठा ले गयी और हफ्ते भर बाद उन्हें हापुड़ (गाजियाबाद) में लश्करे तोइबा के खतरनाक आतंकवादी के रूप में पोटा के तहत पकड़ने का दावा किया। उसमें भी डेढ़ वर्ष पूर्व रुद्रपुर के रवीन्द्र नगर में हत्यारे अभियुक्त को पकड़ने की जगह क्षेत्राधिकारी पुलिस के नेतृत्व में इस सरकारी गुण्डा गिरोह ने गरीब बंगाली आबादी पर ऐसा ही कहर बरपा किया था।

यह एक जीता-जागता सच है कि पिछले छप्पन वर्षों के दौरान आजाद देश की पुलिस ने आम जनता का उससे ज्यादा बर्बरतापूर्वक दमन किया है, जितना कि दो सौ वर्षों के दौरान अंग्रेज हुक्मरानों ने किया था। उदारीकरण के इस दौर में तो बौराई पुलिस का दमन और तेज हो गया है। चाहे राज्य की कांग्रेस सरकार हो या केन्द्र की भाजपा नेतृत्व वाली राजग सरकार, सभी दमन के नित नये कीर्तिमान स्थापित कर रही हैं। इन वारदातों से पुलिस के प्रति जनता की नफरत और ज्यादा बढ़ती जा रही है। पुलिस चौकी पर उसका पूरा गुस्सा इसकी एक अभिव्यक्ति मात्र है।

आज चौकी पर हमला करने वालों पर प्रशासन ने रासुका (राष्ट्रीय सुरक्षा कानून) लगा दिया है, लेकिन हत्यारे और दमनकारी शासन-प्रशासन-पुलिस को दण्डित कौन करेगा, यह आने वाला वक्त ही बतायेगा, जब जनता अपने ऊपर होने वाले एक-एक जुल्म का बदला लेगी।

चिता पे जिनके पांव नहीं जलते...

नमक मजदूरों की दिल दहलाने वाली दास्तान

विश्व के दूसरे मजदूरों की ही भांति भारत में भी नमक के खेतों में काम करने वाले मजदूर बदहाली का जीवन जी रहे हैं। सरकार के मुताबिक करीब एक लाख मजदूर नमक उद्योग में लगे हुए हैं लेकिन वास्तव में इनकी गिनती तीन लाख से भी ज्यादा है। इनमें भी सबसे बड़ी संख्या गुजरात के नमक मजदूरों की है। यहां के नमक के खेत 10 एकड़ से लेकर 500 एकड़ तक के होते हैं जो ज्यादातर बड़ी कम्पनियों और बड़े ठेकेदारों के अधीन हैं। ये मजदूरों की लूट करने में कोई कसर नहीं छोड़ते। बेहद कठिन परिस्थितियों में नमक मजदूरों को दिन में बारह घंटे, हफ्ते में सात दिन और साल में आठ महीने काम करना पड़ता है। इसके बदले मजदूरों को सिर्फ 20-70 रु. दिहाड़ी मिलती है। हाड़तोड़ करके इंसानों के लिए बेहद जरूरी नमक पैदा करने वाले ये मजदूर इन काम के आठ महीनों में मुश्किल से दो वक्त की रोटी कमा पाते हैं। पर वर्ष के बाकी चार महीने बेरोजगारी की मार झेलते इन मजदूरों को यह भी नसीब नहीं होता। ये मजदूर ज्यादातर गांव छोड़कर अपने परिवार सहित काम करने के लिए आते हैं। झुग्गी-झोपड़ी में रहते हैं। बिजली नहीं, साफ पानी नहीं, बच्चों के लिए स्कूल नहीं, स्वास्थ्य सुविधा नहीं अर्थात इंसान होकर भी इंसान जैसी जिन्दगी नहीं, मूल्य पैदा करने वालों का कोई मूल्य नहीं।

नमक के खेतों में काम करने वाले मजदूरों को अपना खाना बनाकर भोर में ही लगभग 4-5 बजे तक खेतों में पहुंचना होता है। इसके लिए उन्हें भोर में तीन बजे ही उठ जाना पड़ता है। मजदूर इन खेतों में दोपहर के 11-12 बजे तक काम करते हैं और शाम को पांच बजे के बाद फिर काम पर लग जाते हैं। दोपहर को आग उगलते सूरज के नीचे इन खेतों में काम करना नामुमकिन हो जाता है। सूरज की तेज किरणें नमक के खेतों की जमीन से टकराकर और भी तेज हो जाती हैं और आंखों को अंधी करती हैं। इसके बावजूद नमक मजदूरों के लिए इस तेज रोशनी से बचने वाले चश्मों का कोई प्रबंध नहीं, जिस कारण इन मजदूरों की आंखें कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त होती हैं। खारे पानी में खेती करना एवं नमक के टोकरे सिर पर उठाकर 50-50 फुट की दूरी तक लेकर जाना बेहद खतरनाक काम है क्योंकि जिस्म पर गिरी पानी की एक बूंद भी शरीर की चमड़ी में जलन या छाले पैदा कर देती है। नमक मजदूरों में लगभग 40 प्रतिशत औरतें हैं जो कई प्रकार की बीमारियां जैसे छाले, जलन, सिर दर्द, बाल झड़ना आदि से पीड़ित हैं। मजदूरों को इन बीमारियों से बचाने के लिए कोई प्रबंध नहीं किया जाता।

नमक मजदूर उम्र भर कर्जे में डूबे रहते हैं। अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए उन्हें ठेकेदारों से कर्ज लेना पड़ता है और फिर उसे चुकाने के लिए परिवार सहित सख्त मेहनत करते हैं। यह हर नमक मजदूर की आम कहानी है। ये लोग जोड़ी के हिसाब से मैनेजर या खेत-मालिक से कर्ज लेते हैं और फिर अगले मौसम में जोड़ी को उसी मालिक के खेत में काम करना पड़ता है। अगर वे कर्ज चुका दें तो जोड़ी किसी दूसरे मालिक के खेत में काम कर सकती है वरना कर्ज चुक जाने तक उसी नमक खेत मालिक से बंधी रहती है। ऐसे मजदूरों को ज्यादातर एक ही स्थान पर एक हफ्ते से ज्यादा काम नहीं करवाया जाता। इससे मालिकों का दोहरा फायदा होता है। एक तो मजदूर संगठित नहीं हो पाते और मालिकों को मजदूरों का, उन्हें दिये गये मेहनताने का रिकार्ड नहीं रखना पड़ता। इस प्रकार पूंजीपति मजदूरों का ज्यादा से ज्यादा शोषण करने में और अपने लिए ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाने में सफल रहते हैं।

मजदूरों का शोषण यहीं खत्म नहीं होता। कम्पनियों के एजेण्ट मजदूर सप्लाई करने के पैसे कम्पनियों से तो लेते ही हैं, साथ में मजदूरों से भी कमीशन खाते हैं। काम के मौसम के शुरू में नमक खेतमालिक मजदूरों को केवल 20-20 रुपये दिहाड़ी देते हैं। बड़ी निजी कम्पनियां आसपास के गांवों के मजदूरों को दिहाड़ी पर रखती हैं। ट्रक पर सामान लादने और उतारने वाले मजदूरों को 100 किलो का बड़ा थैला उठाने के लिए सिर्फ 30-50 पैसे प्रति थैला ही दिये जाते हैं। नमक की पैकिंग करने वाले नमक मजदूरों को भी बहुत कम मजदूरी दी जाती है। आधा किलो की हजार थैलियां पैक करने के लिए एक मजदूर को 30 रुपये और एक किलो की 1000 थैलियां पैक करने के लिए एक मजदूर को 40 रुपये मिलते हैं।

मजदूरों को मिलने वाली मजदूरी इतनी कम होती है कि वे पक्के घर बने का सपना भी नहीं देख सकते। इस कारण वे लोग नमक के खेतों में ही झुग्गी-झोपड़ियां बनाकर रहते हैं। 1998 में आये तूफान की वजह से हजारों अग्रीयों (गुजरात के नमक मजदूर) की मौत हो गयी थी। अग्रीयों की इतनी बड़ी संख्या में हुई मौतों का कारण कुदरत का वजह नहीं बल्कि गरीबी थी, किसी भगवान का कोप नहीं बल्कि मालिकों द्वारा अग्रीयों का शोषण था। इनकी झुग्गी-झोपड़ियां इतनी कमजोर थीं कि तूफान के आगे टिक न सकीं। गरीबी के कारण अग्रीय कभी स्कूल नहीं जा पाते। इनकी अनपढ़ता का फायदा उठाकर मालिक हिसाब-किताब में भी इनको ठगते हैं। छोटी उम्र में ही अग्रीय नमक के खेतों में काम करने लगते हैं। नमक के खेतों में पैदा होने वाले अग्रीयों की मौत भी इन्हीं खेतों में होती है। सारी उम्र नमक के खेतों में काम करने के कारण अग्रीयों के पैर इतने सख्त हो जाते हैं कि एक कहावत प्रचलित है कि चिता पे अग्रीयों के पांव नहीं जलते...और ये पूरे भारत के नमक मजदूरों के लिए सच है।

सरकार भी हर कदम पर पूंजीपतियों का ही साथ देती है, और दे भी क्यों न? सरकार तो खुद पूंजीपति है। राज्य और केन्द्र सरकारें क्रमशः 3 करोड़ रु. स्वत्व शुल्क और 2 करोड़ रु. कर के रूप में लेती हे। 1990 के दशक में गुजरात में पट्टे पर दी गई 16,000 एकड़ जमीन में से 93 प्रतिशत जमीन केवल 16 बड़े मालिकों और बड़ी कम्पनियों को दी गई। अलग मौकों पर सरकार नमक मजदूरों की हालत सुधारने की घोषणाएं करती हं लेकिन मजदूरों की हालत लगातार बदतर होती जा रही है। पूंजीपतियों की सरकार जब तक रहेगी तब तक मजदूरों की हालत कभी नहीं सुधरेगी।

-नवकाश दीप

एवन साइकिल के मजदूरों की हड़ताल

चुप्पी अब टूट रही है!

बिगुल प्रतिनिधि

लुधियाना। देश के बड़े औद्योगिक नगरों में से एक लुधियाना। यहां लाखों मजदूर गुलामों से भी बदतर जिन्दगी जीने को मजबूर हैं। भारतीय हुक्मरानों ने जब से भूमण्डलकरण, उदारीकरण की नीतियां अपनाई हैं, मजदूरों की जिन्दगी बदतर ही होती गई है। पूंजीपतियों की तरक्की मजदूरों की जिन्दगी को लगातार बदतर बनाने पर ही निर्भर है। पिछले डेढ़ दशक से यह प्रक्रिया पूरे देश में जारी है। लुधियाना में भी वही सब कुछ घटित हो रहा है जो देश के अन्य औद्योगिक नगरों में।

पूंजी की ताकतों को बेलगाम छोड़ दिये जाने से, देशी-विदेशी पूंजीपतियों में मंडी और मुनाफे के लिए होड़ तीखी हुई है। मंडी में अपने मुनाफे को वही पूंजीपति बरकरार रख पाते हैं, जिनका माल सस्ता या अच्छी क्वालिटी का हो। सस्ता माल तैयार करने का एकमात्र साधन है मजदूरों की तनख्वाहों में कटौती या तनख्वाहें जाम करना तथा मजदूरों को हासिल अन्य सुविधाओं का खत्म किया जाना। यही प्रक्रिया लुधियाना में पिछले कई सालों से जारी है। मजदूरों की तनख्वाहें कम हो रही हैं, काम का लोड़ बढ़ता जा रहा है, काम के घण्टे बढ़ाये जा रहे हैं, काम करवा कर मालिकों द्वारा मजदूरों को पैसा न देना, जरा भी चूं-चपड़ करने पर फैक्टरी गेट से बाहर कर देना, यहां आम बात है। मगर इस सबके बावजूद यहां मजदूरों द्वारा इस जुल्मो-सितम के खिलाफ कोई संघर्ष उठता नजर नहीं आ रहा था। इस पूरे औद्योगिक इलाके पर एक कब्रिस्तान जैसी चुप्पी छाई हुई दिखती थी। मगर पिछले कुछ महीनों से यहां की बड़ी फैक्टरियों में हड़तालों का जो सिलसिला चला है, वह इस चुप्पी के टूटने का संकेत है। मालिकों के शोषण-उत्पीड़न-अन्याय के खिलाफ मजदूरों के हितों में जो गुस्सा और नफरत जमा हो रही थी, वह अब विस्फोटक रूप में सामने आ रही है। कोई ढाई तीन महीने पहले हीरो साइकिल में जबर्दस्त हड़ताल हुई थी। उससे कुछ समय पहले ही भोगल इंडस्ट्रीज में भी हड़ताल हुई। एक और साइकिल कम्पनी की दो यूनिटों के मजदूर सड़कों पर हैं।

एवन साइकिल में बहुत देर से अन्दर ही अन्दर आग धधक रही थी, जिसने अब लपटों का रूप धारण कर लिया है। कुछ समय पहले जी.टी. रोड पर स्थित यूनिट दो के मजदूरों ने कुछ घंटों के लिए हड़ताल की थी, जिस पर मजदूरों को धमकाने के लिए मालिकों ने गुंडों की मदद ली थी। इस पर मजदूरों का गुस्सा और भी भड़क उठा था। हजारों मजबूत हाथ जब एकजुट हुए तो मालिकों के टुकड़ों पर पलने वाले गुंडों को भागने का रास्ता दिखाई नहीं दे रहा था। एक बार तो मजदूरों और मालिकों में समझौता हो गया और मजदूरों ने हड़ताल वापस ले ली, पर मजदूरों की मांगें वैसे ही लटकती रहीं। पिछले 15 जनवरी को मजदूरों ने काम बंद करके फिर से संघर्ष का बिगुल बजा दिया। मजदूरों की मुख्य मांग भी-पिछले लम्बे समय से मालिकों ने मजदूरों की तरक्की (तनख्वाह में बढ़ोत्तरी पर) जो रोक लगा रखी थी, उसको हटवाना। 16 जनवरी को हजारों मजदूरों ने लेबर दफ्तर पर जोरदार प्रदर्शन किया। मजदूरों के इस संघर्ष को एवन तथा हीरो की सभी यूनिटों के मजदूरों के अलावा, कंगारू इंडस्ट्रीज, भोगल इंडस्ट्रीज, खन्ना इंडस्ट्रीज तथा ग्रेटवे इंडस्ट्रीज के हजारों मजदूरों का समर्थन प्राप्त हुआ। 16 जनवरी के प्रदर्शन में इन तमाम फैक्टरियों के मजदूर भी शामिल हुए। लेबर दफ्तर पर प्रदर्शन के बाद नारे लगाते हुए हजारों मजदूर जनता नगर स्थित एवन साइकिल की यूनिट एक के सामने से गुजरे। जिससे उत्साहित होकर यूनिट एक के मजदूरों ने भी हड़ताल का ऐलान कर दिया और अपने अन्य संघर्षशील मजदूरों के कंधे से कंधा मिलाते हुए प्रदर्शन में शामिल हो गये। हजारों मजदूरों का यह प्रदर्शन अभी प्रताप चौक ही पहुंचा था कि मजदूरों को खबर मिली कि पीछे रह गये कुछ मजदूरों पर मालिकों के गुंडों ने हमला कर दिया है। इस घटना ने मजदूरों के गुस्से को और भी भड़का दिया। हजारों मजदूर फैक्टरी की तरफ भागे, मालिकों, गुण्डों तथा मैनेजरों की गाड़ियां मजदूरों के गुस्से का शिकार हुई। फैक्टरी में पहले से ही तैनात सैकड़ों पुलिस वाले गलियों में छुपकर अपनी जान बचाते हुए देखे गये।

यह रिपोर्ट लिखे जाने तक मजदूरों का संघर्ष जारी था। मजदूरों के इस जबर्दस्त संघर्ष को देखते हुए जिला प्रशासन भी अपने असली रंग में आ गया। मालिकों की पीठ थपथपाते हुए जिला प्रशासन ने 18 मार्च तक पूरे जिले में धारा 144 लागू कर दी, तथा हर तरह के धरने-प्रदर्शन पर पाबंदी लगा दी, मगर प्रशासन के ये कदम भी नाकाम साबित हो रहे हैं। 19 जनवरी को हजारों मजूदरों ने दरेसी मैदान में जबर्दस्त रैली की।

एक लम्बे समय की चुप्पी के बाद लुधियाना में मजदूरों का स्वतःस्फूर्त ढंग से इस तरह सड़कों पर आना आने वाले दिनों का संकेत है। वहीं इसका एक दुखद पहलू यह है कि यहां क्रान्तिकारी शक्तियां बेहद कमजोर स्थिति में हैं। इन मजदूर आंदोलनों में क्रान्तिकारी शक्तियों की गैर हाजिरी जैसी स्थिति अब भी बनी हुई है।

21 जनवरी 2004

मेहनतकश साथियो! नौजवान दोस्तो!

सोचो!

**46 साल तक
चुनावी मदारियों से
उम्मीदें पालने के बजाय
अगर हमने इंकलाब की राह चुनी होती
तो भगतसिंह के सपनों का भारत
आज एक हकीकत होता।**

**धार्मिक कट्टरपंथ पूंजीवादी चुनावी राजनीति की
दोगली औलाद है**

**चुनावी मदारियों से पीछा छुड़ा लो!
समाजवादी क्रान्ति की राह अपना लो!**

काली आंधी के बीच चुनावी मौसम में "खुशनुमा बयार"

(पेज 1 से आगे)

का भी खूब ढिंढोरा पीटा जा रहा है। इस उछाल की असलियत यह है कि विदेशी संस्थागत निवेशक फटाफट मुनाफा कमाने की फिराक में भारत की कंपनियों के शेयर धड़ाधड़ खरीद रहे हैं। शेयर बाजार के तेजड़ियों का यह खेल है जो शेयर धारकों की कागजी सम्पत्ति खरीदकर या बेचकर सम्पत्ति भुना रहे हैं। कौन नहीं जानता कि इस राशि का कोई उपयोग उत्पादन, रोजगार या निर्यात बढ़ाने में नहीं होता। शेयर मार्केट के इस उतार-चढ़ाव के दौरान विदेशी सटोरिये लाखों-करोड़ों रुपये देश से बाहर ले जाते हैं। ये मारीशस के रास्ते भारत आकर भारी मुनाफा कमाते हैं और सरकार को एक धेला टैक्स भी नहीं चुकाते। इन जमातों के लिए ही अगर सरकार फील गुट फैक्टर की बात कर रही है तो वह सौ फीसदी सच कह रही है।

शेयर बाजार की इस ताजा उछाल का एक और भी कारण है। इसे जानबूझकर ओझल किया जा रहा है। सरकार ने पिछले साल बजट में एक मार्च 2003 से 29 फरवरी 2004 तक शेयरों की खरीद में आयकर से छूट दी थी। इस भारी उछाल के बावजूद अंदर की हालत यह है कि प्राइमरी शेयर बाजार से पूंजी जुटाने का साहस कोई कंपनी नहीं कर पा रही है। पिछले साल केवल 15 कंपनियों ने ही हिम्मत जुटायी और मिले भी केवल 2000 करोड़ रुपये। शेयर बाजार का समूचा कारोबार भी केवल उंगलियों पर गिने जा सकने वाली कंपनियों के कारोबार तक सिमटा हुआ है। फिर भी फील गुड फैक्टर का नगाड़ा बज रहा है। शायद तब बजता रहे जब कि चढ़ती शेयर कीमतों का फूलता गुब्बारा पंक्चर न हो जाये और शेयर कीमतें औंधे मुंह गिरकर बाजार में सन्निपात न पैदा कर दें। तब तक सारे विदेशी निवेशक अपनी पूंजी निकालकर रफू चक्कर हो जायेंगे जैसा पहले कई बार हो चुका है।

मिनी बजट का विराट सच

चुनावी लाभ के मद्देनजर वित्तमंत्री जसवन्त सिंह ने जो मिनी बजट पेश किया उससे देश की मेहनतकश जनता को रत्ती भर राहत भी नहीं नसीब होने वाली। उल्टे मध्य वर्ग और उच्च वर्ग को लुभाने के लिए जो राहतें दी गयी हैं उसकी भरपाई के लिए आम गरीब आबादी को चुनावों के बाद फिर से निचोड़ा जायेगा।

मिनी बजट में वित्त मंत्री महोदय ने गैर कृषि उत्पादों पर सीमा शुल्क की अधिकतम दरों में पांच प्रतिशत कटौती (25 से घटाकर 20 प्रतिशत) कर दी है और विशेष अतिरिक्त शुल्क को पूरी तरह खत्म कर दिया है। सेल फोन, कंप्यूटर और डी वी डी जैसे उत्पादों पर शुल्कों में कटौती से जाहिर है समाज के नौदौलतिये और अन्य सभी धनी तबके ही खुश होंगे। साथ ही विदेशी कंपनियां मालामाल होंगी और देशी निर्यातक भी गिल्ल होंगे। शुल्कों में यह कटौती विश्व व्यापार संगठनों की शर्तों का पालन करना भी है।

एक मोटे अनुमान के अनुसार शुल्कों में इस कटौती से सरकारी खजाने को लगभग 11 हजार करोड़ रुपये का चूना लगेगा। यह उद्योगपतियों-व्यापारियों को दी गयी एक प्रकार की परोक्ष सब्सिडी भी है। आयात शुल्कों में इस कमी से राजस्व में जो कमी आयेगी उसकी भरपायी करने के लिए और विदेशी कर्ज लिया जायेगा। इसका नतीजा यह होगा कि जन सुविधाओं में और कटौती होगी तथा शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों का निजीकरण और तेज रफ्तार से होगा।

मिनी बजट में कृषि क्षेत्र, ढांचागत विस्तार और लघु उद्योगों के लिए 50,000 करोड़ रुपये मुहैया कराने का होहल्ला मचाकर भी जनता को खुशनुमा अहसास कराया जा रहा है। अपने इन कदमों से गदगद वित्तमंत्री महोदय दूसरी हरित क्रांति के मंसूबे बांध रहे हैं। इस ढपोरशंखी राग की असलियत यह है कि यह राशि भी सरकार सीधे अपने खजाने से देने के बजाय ब्याज दरों में कटौती करके कर्ज मुहैया करायेगी। यह निजीकरण को ही बढ़ावा देना है। किसानों के नाम पर मुनाफा कमाने वाले फार्मर-पूंजीवादी भूस्वामी ही इससे फायदा उठायेंगे।

सरकार की अमीरपरस्ती इस सच्चाई से भी बखूबी उजागर हो जाती है कि महंगे मकानों और कारों के लिये सस्ती दरों पर कर्जे उपलब्ध कराये जाते हैं जबकि किसानों को भारी सूद पर कर्ज दिया जाता है और भी सभी किसानों को एक ही दर पर चाहे वह मुनाफा कमाने वाला किसान हो या छोटी जोत या छोटी पूंजी वाला किसान, जो एक बार अगर बैंक-साहूकार के कर्ज के चक्कर में पड़ गया तो उसकी आने वाली कई पीढ़ियां कर्जो का सूद भरते-भरते मर जायेंगी पर सूद नहीं खत्म होगा, मूल बचा रहेगा सो अलग से। आम आदमी की बचत पर कीमतों में बढ़ोत्तरी बराबर ब्याज भी नहीं मिलता और कर्ज न जमा करने पर चौखट भी उखाड़ कर नीलाम कर दिया जाता है जबकि उद्योगपति सरकारी बैंकों के हजारों करोड़ रुपये दबाये बैठे है और सरकार उनका बाल भी बांका नहीं कर पा रही है। उल्टे समय-समय पर इनके कर्जे माफ करती रहती है।

यह कैसा खुशनुमा अहसास?

वस्तुएं	राजग सरकार बनने से पहले की कीमतें (रु. में)	राजग सरकार बनने के बाद की कीमतें (रु. में)	प्रतिशत बढ़ोत्तरी
डीजल	8.50	22.00-24.00	300
पेट्रोल	16.00	34.00-38.00	238
मिट्टी का तेल (कंट्रोल से)	3.05	11.50	377
गैस सिलिंडर	145.00	270.00	186
यूरिया	115	270.00	235

राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी के दावे की पोल

सरकार यह दावा कर रही है कि पिछली छमाही में राष्ट्रीय आय (सकल घरेलू उत्पाद, जी डी पी) में 8.4 प्रतिशत का इजाफा हुआ है। यह फील गुड फैक्टर है। लेकिन पूंजीवादी अर्थशास्त्र की आंकड़ों की जालसाजी से वाकिफ हर व्यक्ति जानता है कि राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी से आम जनता की स्थिति बेहतर नहीं हो जाती। दरअसल यह उत्पादन बढ़त भी न केवल चंद हाथों में केन्द्रित है वरन ऐसी सेवाओं और वस्तुओं के रूप में हुई है जिनका इस्तेमाल आम जनता नहीं करती। केवल मुट्ठीभर ऊपरी अमीर तबका ही इनका इस्तेमाल करने की कूवत रखता है। व्यापार, होटल व्यवसाय, रेस्तरां और वित्तीय क्षेत्र में हुई बढ़त राष्ट्रीय आय का हिस्सा बनती है। यह बढ़त न उपभोग का स्तर बढ़ाती है न ही कोई उत्पादक निवेश होता है और न ही अतिरिक्त रोजगार इससे पैदा होता है। यह रोजगार घटाऊ उत्पादन बढ़त भी सिर्फ कुछेक प्रदेशों तक ही सीमित है। राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी संबंधी आंकड़ों के फर्जीवाड़े को एक पूंजीवादी अर्थशास्त्री ने ही इन शब्दों में बयान किया : ''राष्ट्रीय आय में बढ़त को विकास और जनकल्याण का सूचक मानना एक लाश का बोझ ढोने जैसा है।''

राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी की असलियत तब बिल्कुल उजागर हो जाती है जब हम देश में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपभोग पर एक नजर डालते हैं। देश में इस समय प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपभोग का स्तर प्रति वर्ष मात्र 132 किग्रा. रह गया है। यह स्तर दूसरे महायुद्ध के दिनों में और यहां तक कि बंगाल के अकाल के समय से भी नीचे है। देश में नयी आर्थिक नीतियां लागू करने से पहले 1990-91 में यह 246 किग्रा. था, यानी 114 किग्रा. की भारी कमी। फिर भी जनता से कहा जा रहा है फील गुड। हालत यह है कि लगभग 32 करोड़ लोग भुखमरी और कुपोषण के शिकार हैं जबकि 6 करोड़ टन अनाज खुले में सड़ रहा है। यह प्रचुरता के बीच भुखमरी की वही विभीषिका है जो पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली की विशेषता है। और इस पूंजीवादी व्यवस्था को चलाने वालों की हृदयहीनता की नजीर देखिये कि जब खाद्यान्नों के निर्यात की मांग में कमी आ गयी तो यह प्रस्ताव आया कि एफ सी आई के गोदामों को खाली करने के लिए फाजिल अनाज को समुद्र में फेंक दिया जाये।

राष्ट्रीय आय में इस बढ़ोत्तरी से जनता को मिलने वाली सुविधाओं में कोई बढ़ोत्तरी नहीं होती, इसे स्वास्थ्य और शिक्षा पर सरकारी खर्च की मात्रा से भी समझा जा सकता है। सरकार स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए कुल राष्ट्रीय आय का केवल एक प्रतिशत और शिक्षा पर सिर्फ 4.1 प्रतिशत खर्च करती है। पांच साल की उम्र तक के हर 1000 बच्चों में से 93 बच्चे हर साल मर जाते हैं। देश में इस समय कुल उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं में मात्र 18 प्रतिशत सरकारी क्षेत्र में है और बाकी 82 प्रतिशत निजी क्षेत्र में। राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी की हकीकत यही है।

दूसरी 'हरित क्रांति' की पोल

वित्तमंत्री जसवन्त सिंह ने अपने चुनावी मिनी बजट में कृषि क्षेत्र के लिए पचास हजार करोड़ रुपये का पैकेज घोषित कर यह डंका बजाया है कि इससे देश में दूसरी हरित क्रांति के द्वार खुल जायेंगे। कृषि क्षेत्र के लिए उपलब्ध करायी गयी रकम की असलियत की चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं कि किस तरह यह कर्ज के रूप में किसानों को मिलेगा और वह भी इसका फायदा केवल मुनाफा कमाने वाले किसान ही उठा पायेंगे। अगर कृषि क्षेत्र में कुल सरकारी निवेश की बात करें तो वित्तमंत्री

(पेज 7 पर जारी)

बोलते आंकड़े चीखती सच्चाइयां

● एक गैर सरकारी अनुमान के अनुसार आज भी देश में लगभग 32 करोड़ लोगों को भरपेट भोजन नहीं मिलता या वे कुपोषण के शिकार है। दूसरी ओर छह करोड़ टन अनाज भण्डारण की उचित व्यवस्था न होने के कारण खुले में सड़ रहा है। एक अनुमान के अनुसार खुले में पड़ी हुई अनाज की बोरियों को अगर एक ऊपर एक रख दिया जाये तो इनकी ऊंचाई इतनी होगी कि इस पर चढ़ते हुए चांद पर पहुंचा जा सकता है।

● वर्ष 2002 में लगभग दो करोड़ टन अनाज उस कीमत पर निर्यात किया गया जिस कीमत पर गरीबी रेखा से नीचे रहने वालों को कंट्रोल की दुकानों से अनाज दिया जाता है। देश के थोक गल्ला व्यापारियों ने सरकार से सस्ते दरों पर अनाज खरीदकर वापस सरकार को ही महंगे दरों पर बेच दिया। इस तरह सरकार को करोड़ो रुपये का चूना लगाया।

जब से देश में नयी आर्थिक नीतियां लागू होनी शुरू हुई हैं तब से प्रति व्यक्ति खाद्यान्न खपत में भारी गिरावट आयी है। एक गणना के अनुसार 1990 में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न खपत 246 किग्रा सालाना थी जो वर्ष 2002-03 में घटकर केवल 132 किग्रा सालाना रह गयी है यानी कुल 114 किग्रा की गिरावट। यह खपत दूसरे महायुद्ध के दौरान ही नहीं बरन बंगाल की 1942 की अकाल के समय की खपत दर से भी नीचे है।

● एक मोटे अनुमान के अनुसार देश में बेरोजगारों-अर्द्धबेरोजगारों की कुल संख्या 50 करोड़ की संख्या पार कर रही है, यानी देश की आधी आबादी के पास कोई काम नहीं है।

शिक्षित बेरोजगारी की भयावहता का अनुमान सिर्फ इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि पिछले दिनों रेलवे में खलासी के 38000 पदों के लिए 75 लाख नौजवानों ने आवेदन किया था। इनमें आधे से ज्यादा उच्च शिक्षाप्राप्त नौजवान थे। इसी परीक्षा के दौरान असम में बिहारी युवकों के खिलाफ हिंसा की घटनाओं की शुरुआत हुई थी जिसने आगे चलकर भयावह रूप ले लिया था।

● सरकार सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में भारी संख्या में रोजगार पैदा होने का ढिंढोरा पीट रही है। असलियत यह है कि पिछले एक दशक में सिर्फ पांच लाख नौकरियां पैदा हुई हैं।

● इस समय सरकार के ऊपर विभिन्न प्रकार के कर्जों की मात्रा कुल राष्ट्रीय आय (सकल घरेलू उत्पाद-जी डी पी) के 80 प्रतिशत तक पहुंच चुकी है।

● कुल राष्ट्रीय आय (जी डी पी) में केन्द्र सरकार को अलग-अलग स्रोतों से मिलने वाले राजस्व का योगदान 10 प्रतिशत होता है। इसमें से पांच प्रतिशत सरकार अपने ऊपर खर्च करती है और पांच प्रतिशत सरकार पर लदे कर्जों के सूद की अदायगी में स्वाहा हो जाता है।

● वित्त मंत्री जसवन्त सिंह द्वारा पिछले दिनों पेश किये गये 'मिनी बजट' में आयात या सीमा शुल्कों में जो भारी कटौती की है उसका फायदा तो विदेशी कंपनियों और अमीर उपभोक्ता उठायेंगे पर इस वजह से राजस्व में जो कमी आयेगी उसका बोझ देश की गरीब जनता पर ही लादा जायेगा। एक मोटे अनुमान के अनुसार केन्द्र सरकार के राजस्व को लगभग 11 हजार करोड़ रुपये की चपत लगेगी। यह देशी-विदेशी उद्योगपतियों- व्यापारियों को परोक्ष रूप से दी गयी सरकारी सहायता भी है।

● 1991-92 में केन्द्र सरकार को विभिन्न प्रकार के करों से जो राजस्व मिलता था वह जीडीपी के 10.3 प्रतिशत के बराबर था जो 2001-02 में घटकर 8.6 प्रतिशत रह गया। इसका मतलब यह हुआ कि सरकार अमीरों को करों में लगातार छूट देती जा रही है और आम जनता को सुविधाएं मुहैया कराने की बात चलने पर खजाना खाली होने का रोना रोती है।

● देश में सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं की खस्ता हाल का अंदाज लगाने के लिए यह तथ्य काफी है कि कुल स्वास्थ्य सेवाओं में सरकारी क्षेत्र का योगदान केवल 18 प्रतिशत है, जबकि 82 प्रतिशत स्वास्थ्य सेवाएं निजी क्षेत्र के दायरे में आती हैं। विश्व बैंक की एक हालिया रिपोर्ट के अनुसार सरकार स्वास्थ्य सेवाओं के लिये जो आर्थिक सहायता देती है उसका केवल 10 प्रतिशत ही गरीबों को मिलता है। बाकी 90 प्रतिशत अमीर हड़प जाते हैं।

● एक सर्वेक्षण के अनुसार पांच साल से कम उम्र के 1000 में से 93 बच्चे हर साल मर जाते हैं।

● राष्ट्रीय आय का केवल एक प्रतिशत स्वास्थ्य सेवाओं पर और केवल 4.1 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च होता है।

● एक सर्वेक्षण के अनुसार देश से लगभग 50 लाख लोग हर साल विदेश यात्राओं पर जाते हैं और लगभग 4 अरब डालर का सोना आयात करते हैं।

विशेष सामग्री

(पैंतीसवीं किस्त)

पार्टी की बुनियादी समझदारी

अध्याय -12

पार्टी सदस्यों की अनुकरणीय हरावल भूमिका

एक क्रान्तिकारी पार्टी के बिना मजदूर वर्ग क्रान्ति को कतई अंजाम नहीं दे सकता। लेनिन ने इस बात को बार-बार जोर देकर कहा था। स्तालिन और माओ ने भी बराबर इस बात पर जोर दिया और बीसवीं सदी की सभी सफल सर्वहारा क्रान्तियों ने भी इसे सच साबित किया।

लेनिन ने सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी के सांगठनिक उसूलों का निर्धारण किया और इसी फौलादी सांचे में बोल्शेविक पार्टी को ढाला। चीन की पार्टी भी बोल्शेविक पार्टी की ही उत्तराधिकारी थी। सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान, समाजवादी समाज में वर्ग-संघर्ष का संचालन करते हुए माओ के नेतृत्व में चीन की पार्टी ने अन्य युगान्तरकारी सैद्धान्तिक उपलब्धियों के साथ-साथ लेनिनवादी सांगठनिक सिद्धान्तों को भी और आगे विकसित किया।

सोवियत संघ और चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के लिए बुर्जुआ तत्वों ने सबसे पहले यही जरूरी समझा कि सर्वहारा वर्ग की पार्टी का चरित्रा बदल दिया जाये। हमारे देश में भी क्रान्ति का रास्ता छोड़ संसदीय रास्ते पर चलने वाली नामधारी कम्युनिस्ट पार्टियां मौजूद हैं। भारतीय मजदूर क्रान्ति को सफल बनाने के लिए भारत में भी सर्वहारा वर्ग की एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने का काम सबसे ऊपर है।

इसके लिए बेहद जरूरी है कि मजदूर वर्ग यह जाने कि असली और नकली कम्युनिस्ट पार्टी में क्या फर्क होता है और एक क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी कैसे खड़ी की जानी चाहिए।

इसी उद्देश्य से, फरवरी 2001 के अंक से हमने एक बेहद जरूरी किताब 'पार्टी की बुनियादी समझदारी' के अध्यायों का किस्तों में प्रकाशन शुरू किया है। यह किताब सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पार्टी-कतारों और युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए तैयार की गई श्रृंखला की एक कड़ी थी। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की दसवीं कांग्रेस (1973) में पार्टी के गतिशील क्रान्तिकारी चरित्रा को बनाये रखने के प्रश्न पर अहम सैद्धान्तिक चर्चा हुई थी, पार्टी का नया संविधान पारित किया गया था और संविधान पर एक महत्वपूर्ण रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी। इसी नई रोशनी में यह पुस्तक एक सम्पादकमण्डल द्वारा तैयार की गई थी। मार्च, 1974 में पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, शंघाई से इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की 4,75,000 प्रतियां छपीं। यह पुस्तक पहले चीनी भाषा से फ्रांसीसी भाषा में अनूदित हुई और 1976 में प्रकाशित हुई। फिर नार्मन बेथ्यून इंस्टीट्यूट, टोरण्टो (कनाडा) ने इसका फ्रांसीसी से अंग्रेजी में अनुवाद कराया और 1976 में ही इसे प्रकाशित कर दिया। प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद मूल पुस्तक के इसी अंग्रेजी संस्करण से किया गया है। -सम्पादक

सर्वहारा वर्ग के उन्नत तत्वों के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को संविधान में बतायी गयी पार्टी सदस्यों की पांच पूर्वशर्तों को सचेतन तौर पर पूरा करना चाहिए। उन्हें अपने आप पर सख्त होना चाहिए, तीन महान क्रान्तिकारी संघर्षों में अपनी अनुकरणीय हरावल भूमिका को पूरी तरह निभाना चाहिए, और पार्टी की बुनियादी लाइन को लागू करने और अपनी जुझारू जिम्मेदारियों को पूरा करने के संघर्ष में व्यापक क्रान्तिकारी जनसमुदायों का नेतृत्व करना चाहिए।

कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की अनुकरणीय हरावल भूमिका बेहद महत्वपूर्ण है

अध्यक्ष माओ हमें सिखाते हैं : "यहां कम्युनिस्टों की अनुकरणीय हरावल भूमिका का अत्यन्त महत्व है। आठवीं राह सेना और नयी चौथी सेनाओं में कम्युनिस्टों को बहादुरी से लड़ने, आदेशों का पालन करने, अनुशासित रहने, राजनीतिक काम करने और आंतरिक एकता और एकजुटता को मजबूत करने की मिसाल कायम करनी चाहिए।" (*माओ त्से-तुङ*, संकलित रचनाएं, *खंड, "राष्ट्रीय युद्ध में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की भूमिका"*, पृ. 97, *अंग्रेजी संस्करण*) अध्यक्ष माओ की शिक्षाएं हमारी पार्टी के सदस्यों के लिए निर्देशों का एक खाका उपलब्ध कराती हैं जिसे सभी सदस्यों को लागू करने के लिए प्रयास करना चाहिए। व्यवहार में, उन्हें एक तिहरी भूमिका निभानी चाहिए : उन्हें जनता के लिए एक मिसाल होना चाहिए, उन्हें क्रान्तिकारी कामों का मुख्य आधार होना चाहिए और पार्टी और जनता के बीच एक सेतु का काम करना चाहिए।

जनता के लिए मिसाल बनने के लिए, उन्हें अध्यक्ष माओ की क्रान्तिकारी लाइन की हिफाजत करने में, पार्टी की दिशा को मानने और इसकी नीतियों को लागू करने और साथ ही साथ उच्चतर निकायों के निर्देशों और निर्णयों को लागू करने के काम में अगली कतारों में होना चाहिए। हर काम को पूरा करने में, उन्हें मिसाल पेश करनी चाहिए, जनसमुदायों को जागृत करना चाहिए और अपने कामों से उन्हें प्रभावित करना चाहिए, तथा अध्यक्ष माओ की क्रान्तिकारी लाइन को लागू करने और पार्टी की दिशा और नीतियों को मानने में उनका नेतृत्व करना चाहिए।

क्रान्तिकारी कामों का मुख्य आधार बनने के लिए, उन्हें तीन महान क्रान्तिकारी संघर्षों में अनुकरणीय हरावल भूमिना निभानी चाहिए। मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्लासिकीय रचनाओं और अध्यक्ष माओ की रचनाओं का अध्ययन करने में उन्हें अगली कतारों में होना चाहिए, वर्ग शत्रु से संघर्ष में शामिल होने में अग्रणी होना चाहिए, उत्पादन के लक्ष्यों को पूरा करने, वैज्ञानिक प्रयोगों को जारी रखने और दिक्कतों से पार पाने में अग्रणी होना चाहिए। पार्टी और राज्य द्वारा सौंपे गये सारे कामों को पूरा करने के लिए उन्हें जनसमुदायों को एकजुट करना चाहिए और उनकी अगुवाई करनी चाहिए।

पार्टी और जनता के बीच सेतु का काम करने के लिए, उन्हें जनसमुदाय के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने चाहिए, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा के आधार पर, और पार्टी की लाइन, दिशा और नीतियों के आधार पर उनके बीच सक्रिय प्रचार और शिक्षा का काम चलाना चाहिए। उन्हें संघर्ष के जरिए जनसमुदायों के विवेक और अनुभवों को संकेन्द्रित करने और हमेशा उनकी रायों और मांगों को समझने और प्रतिबिम्बित करने में सक्षम होना चाहिए।

हमारी पार्टी की प्रकृति ही सदस्यों के लिए यह आवश्यक बना देती है कि जनसमुदायों के बीच वे अनुकरणीय हरावल भूमिका निभाएं। हमारी पार्टी सर्वहारा वर्ग की अगुआ है। हमारी पार्टी का उन्नत चरित्र सिर्फ इसकी मार्गदर्शक विचारधारा, कार्यक्रम, लाइन और राजनीतिक सिद्धान्तों में ही नहीं, बल्कि इसके सदस्यों की अनुकरणीय अगुआ भूमिका में भी निहित है। इसलिए सभी कम्युनिस्टों को अपनी गतिविधियों को मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ त्से-तुङ विचारधारा पर आधारित करना चाहिए। उन्हें उन कसौटियों के अनुसार अपने साथ सख्ती बरतनी चाहिए जिनकी उम्मीद सर्वहारा वर्ग के उन्नत तत्वों से की जाती है और अपनी गतिविधियों में नजीर पेश करना चाहिए, ताकि वे जनसमुदायों के लिए आदर्श का काम कर सकें और उनके बीच एक अगुआ भूमिका निभा सकें।

पार्टी के जुझारू काम कम्युनिस्टों के लिए यह जरूरी बना देते हैं कि वे जनसमुदायों के बीच एक अनुकरणीय हरावल भूमिका निभाएं। कम्युनिज्म के उच्च आदर्श को वास्तविकता में बदलने के लिए पार्टी को एक दीर्घकालिक और दुर्गम संघर्ष छेड़ना चाहिए और इसके लिए बड़ी संख्या में ऐसे उन्नत तत्वों की जरूरत होती है जो अपना पूरा जीवन क्रान्ति को समर्पित कर दें। कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य ऐसे ही उन्नत तत्व हैं। पार्टी की बुनियादी लाइन और फौरी जुझारू कामों को इसके हरेक सदस्य द्वारा पूरा किया जाना चाहिए। अगर कम्युनिस्ट अपनी अनुकरणीय अगुआ भूमिका को पूरी तरह निभाएं तो हम पार्टी संगठनों को अगली कतारों के लड़ाकू दस्ते बनाने में सक्षम होंगे जो सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में क्रान्ति जारी रखेंगे, हर किस्म के वर्ग शत्रुओं को हराने में जनसमुदायों को एकजुट और मार्गदर्शित करेंगे और अपनी महान ऐतिहासिक जिम्मेदारी को पूरा करेंगे।

पार्टी की स्थिति भी ऐसी है जो कम्युनिस्टों के लिए यह अनिवार्य बना देती है कि वे जनसमुदायों के बीच अनुकरणीय अगुआ भूमिका निभाएं। हमारी पार्टी चीनी जनता की नेता और संगठनकर्ता है और उनके बीच उसका काफी सम्मान है। व्यापक जनसमुदायों का हमारी पार्टी में भरोसा है और वे इसका समर्थन करती हैं, क्योंकि यह एक महान, गौरवशाली और सही पार्टी है जिसका पोषण स्वयं अध्यक्ष माओ ने किया है और क्योंकि यह अध्यक्ष माओ की मार्क्सवादी-लेनिनवादी लाइन को मानती है। लेकिन जनसमुदायों द्वारा पार्टी को समर्थन देने की एक और वजह यह है कि इसके सदस्यों द्वारा निभायी जा रही अनुकरणीय अगुआ भूमिका को वे देख सकते हैं। जनसमुदायों के बीच पार्टी के सम्मान और प्रभाव को बनाने में कम्युनिस्टों की कथनी और करनी का बहुत महत्व होता है। इसका अर्थ है कि हम कम्युनिस्टों को हर चीज में, पार्टी के हितों से प्रस्थान करना चाहिए और यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि हमारी कथनी और करनी का जनता पर सकारात्मक असर पड़े, कि हम आदर्श की तरह काम करते हुए पार्टी की राजनीतिक लाइन, दिशा और सिद्धान्तों को सचेतन तौर पर लागू करें और कि जहां कहीं भी हम जायें, हम पार्टी के सम्मान को बचायें, ताकि जनसमुदाय इसकी और अधिक कदर एवं समर्थन करें।

ल्यू शाओ ची और लिन पियाओ जैसे उच्चकों ने, जिन्होंने पार्टी निर्माण के प्रश्न पर एक संशोधनवादी लाइन चलायी, पार्टी के सदस्यों को इस उम्मीद में पूंजीपति वर्ग और जमींदार वर्ग की सड़ी और मरणासन्न विचारधारा से भ्रष्ट किया कि वे कम्युनिस्टों की ओजस्वी भावना का दम घोंट देंगे, उनकी अनुकरणीय अगुआ भूमिका से उन्हें भटका देंगे और इस तरह पार्टी की प्रकृति को भ्रष्ट कर देंगे और पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के अपने आपराधिक षडयंत्र को अमली जामा पहना सकेंगे। इसलिए, पार्टी निर्माण पर ल्यू शाओ-ची और लिन पियाओ की संशोधनवादी लाइन की गहराई के साथ आलोचना करना, उनके विषैले प्रभाव को समाप्त करना और सर्वहारा वर्ग के अगुआ के रूप में पार्टी के चरित्र को कायम रखना बेहद जरूरी है।

(अगले अंक में जारी)

(पेज 6 से आगे)

के दावे का खोखलापन एकदम उजागर हो जाता है। पिछले दस वर्षों में कृषि क्षेत्र में सरकारी निवेश जी डी पी के 1.6 प्रतिशत से घटकर 1.3 प्रतिशत रह गया हैं। सरकार ग्रामीण विकास पर 1980 के दशक में जी डी पी का 14.6 प्रतिशत खर्च करती थी। बहरहाल, जो अब साठ प्रतिशत नीचे गिर गया है। इसका सीधा असर ग्रामीण रोजगार पर पड़ा है 10-15 साल पहले एक अनुमान लगाया गया था कि अगर कृषि उत्पादों में वृद्धि दर 10 प्रतिशत हो तो रोजगार वृद्धि दर 7 प्रतिशत होगी। फिलहाल कृषि उत्पादों में वृद्धि दर एक प्रतिशत से नीचे गिर गयी है नतीजतन रोजगार में बढ़ोत्तरी की दर शून्य प्रतिशत से नीचे चली गयी है। कृषि क्षेत्र में अनुसन्धान पर सरकारी खर्चों में जारी कटौती से किसानों की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के बीजों पर निर्भरता लगातार बढ़ती जा रही है।

जहां तक कृषि क्षेत्र में ढांचागत विकास के लिए धन आवंटित करने का सवाल है तो यह देशी-विदेशी पूंजीपतियों के लिए बाजार फैलाने की गरज से किया जा रहा है, किसानों और ग्रामीण क्षेत्र की हित चिन्ता इसमें कहीं से भी नहीं है। इस समूचे ढकोसले को ही जसवन्त सिंह दूसरी 'हरित क्रांति' कह रहे हैं। इस 'क्रांति' का नतीजा होगा-छोटे-मझोले किसानों की और तबाही, किसानों की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर और अधिक निर्भरता। इससे भी अहम बात यह कि जैसे-जैसे देश का कृषि क्षेत्र अंतरराष्ट्रीय बाजार के साथ अधिकाधिक जुड़ता जा रहा है वैसे-वैसे एक अभूतपूर्व खाद्यान्न संकट की ओर देश खिसकता जा रहा है। कई कृषि वैज्ञानिक और अर्थशास्त्री इसकी चेतावनी दे चुके हैं।

देश की अर्थव्यवस्था और आम जनता की जिंदगी के हालात ये हैं और वाजपेयी-आडवाणी मण्डली देश में खुशनुमा बयार बहने की डींग हांक रही है। घपले-घोटालों, भ्रष्टाचार के कारनामों की चर्चा करना यहां बेमानी है। इस बदबू को भी इत्र की खुशबू समझकर सूंघने के लिए कहा जा सकता है। दरअसल यह चुनावी मौसम की बयार है। हर चुनाव के मौसम में संघ परिवार के 'बौद्धिक' मौके की नजाकत को ताड़ते हुए तरह-तरह की बयार बहाते रहते हैं। 1996 के चुनावों में भाजपा ने नारा दिया, 'अयोध्या को राम, महंगाई को लगाम, नारी को सम्मान, नौजवान को काम, यही है भाजपा का पैगाम।' 1998 में यह 'राम-रोटी-इंसाफ' में बदल गया और अगले चुनावों में 'भय-भूख-भ्रष्टाचार' का नारा उछाला गया। इस बार 'फील गुड फैक्टर' की खुशनुमा बयार बहायी जा रही है। भाजपा को पूरी उम्मीद रही है कि इस बयार के झकोरे उसे दुबारा कुर्सी तक पहुंचा देंगे। इसलिए वाजपेयी-आडवाणी ने फिर से रामधुन भी छेड़ दी है। वाजपेयी राममन्दिर के लिए पांच साल की और मोहलत मांग रहे हैं। दरअसल, जब तक चुनाव नतीजे नहीं आ जाते तब तक भाजपाइयों को खुशफहमी की बयार में झूमने से कौन रोक सकता है। लेकिन देश का आम मेहनतकश अवाम अपने अनुभवों से दिन-ब-दिन और अच्छी तरह समझता जा रहा है कि उसकी जिंदगी में सुख-समृद्धि-शांति तो केवल तभी आयेगी जब सत्ता उसके हाथों में होगी यानी उत्पादन, राजकाज और समाज के समूचे ढांचे पर मेहनतकश अवाम का नियंत्रण। देशी-विदेशी पूंजी की लूट और जनता की तबाही का सिलसिला केवल तभी खत्म किया जा सकेगा।

अथ सर्वोच्च न्यायालय पुनः उवाच
सम्पत्ति रक्षा के नाम पर हड़ताली मजदूरों की हत्या जायज

बिगुल संवाददाता

दिल्ली। न्यायपालिका पूंजीवादी व्यवस्था में आम जनता की आस्था का सबसे बड़ा केंद्र हुआ करती है। लेकिन जैसे-जैसे इस व्यवस्था का घिनौना चेहरा लोगों के सामने परत-दर-परत उघड़ता चला जा रहा है, और लोककल्याणकारी राज्य का इसका मुलम्मा जनविरोधी और तानाशाहाना फरमानों से तार-तार होता जा रहा है, व्यापक मेहनतकश जनता इसकी असलियत के बारे में भी जागरूक हो रही है और अपनी मेहनत की लूट के खिलाफ उनका आक्रोश विशाल हड़तालों और बंद में गोलबंद हो रहा है। ठीक इसी समय, न्यायपालिका पूंजीवाद की गोद में खुलकर खेल दिखाती है और मेहनतकशों के विरोध के अधिकार को पूरी तरह कुचल डालने पर आमादा हो चुकी है। न्यायपालिका के सर्वोच्च पायदान माननीय (?) सुप्रीम कोर्ट ने ऐसे ही एक निर्णय में कहा कि हड़तालों या बंद का क्या कोई वैधानिक या नैतिक अधिकार भी है? 15 मार्च 1988 को आयोजित भारत बंद के दौरान केरल में एक आटा मिल मालिक द्वारा हड़तालियों पर गोली चलाने से हुई हड़तालियों की मौत पर सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि यह गोली मिल मालिक द्वारा आत्मरक्षा में चलायी गयी इसलिये वह किसी सजा का हकदार नहीं है। हत्यारों को सजा देने की बजाय माननीय (!) न्यायालय परमहंसों की तरह उपदेश देती है कि जब तक हड़ताली हड़तालों में किसी गड़बड़ी को रोक पाने में समर्थ न हों तब तक उन्हें हड़ताल नहीं करनी चाहिये।

यह सरासर बेतुका और पक्षपातपूर्ण निर्णय है जिसका ठीक-ठीक पोस्टमार्टम होना चाहिये। क्या कोई भी आम आदमी/मजदूर अपनी मर्जी से हड़ताल करता है? स्वाभाविक रूप से नहीं। कोई भी हड़ताल सरकारों, पूंजीपतियों की अन्यायपूर्ण नीतियों और शोषण के खिलाफ स्वतःस्फूर्त ढंग से पैदा होती है। अब निश्चित रूप से परम आदरणीय सुप्रीम कोर्ट की सूक्ति के अनुसार मालिकों को आत्मरक्षा में इन शोषित-उत्पीड़ित हड़ताली लोगों की हत्या कर देने का अधिकार है। ''हे संतो, तुम पहले तो लोगों के घर ढहाओ, उनकी नौकरियां छीन लो, उनको भूखा रखो, खुद मालपुए उड़ाओ, अपने बच्चों की पढ़ाई इंग्लैण्ड में और उनके बच्चों की ट्रेनिंग अपने चौके में कराओ तथा अपनी हालत का रोना रोने पर भी आत्मरक्षा के अधिकार की रक्षा हेतु उनको फूंक डालो।'' क्या बात है...! हिन्दुस्तान के लोग तो इस प्रवचन पर श्रद्धा से सिर नवा रहे हैं।

निश्चित रूप से इस बहरी पूंजीवादी व्यवस्था में हड़तालों से कोई फायदा भी नहीं होता, पर पूजनीय सुप्रीम कोर्ट क्या यह भी बतायेगा कि फायदा कैसे होने वाला है? क्या इस्लामिक बम बनाकर, या फिर त्रिशूल दीक्षा लेकर! निश्चित रूप से हिंदुस्तान की गरीब-भूखी जनता को इस विषय में भी सर्वोच्च न्यायालय के मार्गदर्शन की अनिवार्य आवश्यकता प्रतीत होती है!

क्या न्यायपालिका के ये निर्देश उन गुंडा तत्वों पर भी लागू होंगे जो प्रायः हर दिन बेवजह गुंडागर्दी से जबरदस्ती बंद कराते हैं और उनके मुखियागण, जो जन-गण-मन के हृदय सम्राट होने का दावा पेश करते हैं, सुबह से शाम तक न्यायपालिका के ऐसे आदेशों की धज्जियां उड़ा-उड़ाकर ही जिंदगी तमाम करते हैं। क्या न्यायपालिका उनको इस तरह की गड़बड़ियों के लिए जिम्मेदार ठहरा पाती है?...ठीक ही है, जोर भी कमजोरों पर ही चलता है।

एक और भी सवाल है, जिसपर बात होनी चाहिये। सुप्रीम कोर्ट कहता है कि हड़ताल या बंद के नाम पर किसी व्यक्ति को दूसरे लोगों को असुविधा पहुंचाने, किसी को किसी प्रकार की धमकी देने, जीवन को जोखिम तथा किसी की स्वतंत्रता, संपत्ति या जान अथवा सरकारी या निजी संपत्ति को नुकसान पहुंचाने का अधिकार नहीं है। क्या इसी तर्ज पर इस अदालत से यह सवाल नहीं पूछा जाना चाहिये कि जनता से अन्याय के विरोध का उसका प्राकृतिक अधिकार छीनने का अधिकार उसे किसने दे दिया? अगर उसे सबकी संपत्ति और स्वतंत्रता की इतनी ही चिंता है तो मेहनतकश मजदूरों के श्रम की संपत्ति का इतना अवमूल्यन क्यों हो रहा है इस पर उसकी नजर क्यों नहीं पड़ती? अगर न्यायपालिका जनता की इतनी ही ज्यादा हितैषी है जितना कि वह प्रकट कर रही है तो उसे हड़ताल को पैदा करने वाले कारकों पर ही फतवा जारी करना था। उसे उन पूंजीपतियों- शोषकों, जनविरोधी सरकारी नीतियों के खिलाफ बोलना था जो एक गरीब मजदूर की एकमात्र संपत्ति श्रम का अवमूल्यन करते हैं, उसकी ही नहीं, उसके पूरे परिवार का जीवन जोखिम में डालते हैं और अपनी सुख सुविधाओं के लिए उसके पूरे जीवन को नर्क कर देते हैं। लेकिन, हुआ ठीक इसका उलटा और वह उनके ही खिलाफ बोली जो उसके पास न्याय की आस में आये थे और जिन्हें उसके सहारे की सबसे ज्यादा जरूरत थी।

इसका सीधा मतलब यह है कि न्यायपालिका अपने को जनता के ऊपर आरोपित तानाशाह मान रही है और पूंजीवाद के रक्षक के तौर पर आचरण कर रही है। पर उसे यह समझना चाहिये कि बहुसंख्यक मेहनतकश जनता को इस तरह धमकाने से पूंजीवाद की अवश्यंभावी मौत तो टलनेवाली नहीं ही है बल्कि इस तरह तो बारूद में पलीता और जल्दी लगेगा। कोई भी जनद्रोही व्यवस्था किसी भी प्रकार जनता के आक्रोश से नहीं बच सकती।

भूमण्डलीकरण को 'मानवीय' बनाने में जुटे संसदीय वामपंथियों का असली अमानवीय चेहरा

बिगुल संवाददाता

साम्राज्यवादी भूमण्डलीकरण के मौजूदा दौर का असली अमानवीय चेहरा छुपाया नहीं जा सकता चाहे यह अपने चेहरे को ''मानवीय'' बनाने की लाख कोशिशें कर ले। साथ ही भूमण्डलीकरण के चेहरे को मानवीय बनाने में जुटे संसदमार्गी वामपंथियों का असली चरित्र भी लोगों के सामने बिल्कुल साफ हो चुका है। पिछले एक साल में पश्चिम बंगाल के 14 चायबागानों में भुखमरी से 320 श्रमिकों की मौत से एक बार फिर यही साबित हुआ है कि अपने को आम लोगों की असली पार्टी बताने वाले संसदीय वाम के नंबरदार किस तरह इस पूंजीवादी व्यवस्था को ''मानवीय'' बनाते-बनाते खुद अमानवीय हो गये हैं। अमानवीयता की हद यह है कि राज्य की वाम मोर्चा सरकार ने भूख से मर रहे चाय बागान श्रमिकों की दुर्दशा को देखने लायक भी नहीं समझा। वहां स्थिति यह है कि अपना खून-पसीना एक करने वाले मजदूरों को रोटी-कपड़ा और मकान जैसी बुनियादी चीजें भी नहीं मिल रही हैं, बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधायें तो सपना ही हैं।

प. बंगाल सरकार की यह उदासीनता स्पष्ट कर देती है कि वह अब पूंजीवादी दलों की जमात में अब पूरी नंगई के साथ आ खड़ी हुई है, भले ही चोला लाल ही क्यों न हो।

दूसरी ओर केंद्र सरकार ने इस तथ्य को तो माना है कि चाय बागान बंद हो रहे हैं पर वह भी भूख से हुई इन मौतों को मानने को तैयार नहीं। सच भी है, मौतें भुखमरी से तो हुई नहीं, डायरिया से हुई हैं! अब कोई मजदूर दस-बारह दिन भूखा रहने के बाद घास-पत्ता और नाले का पानी खा-पी ले और डायरिया से मर ही जाये तो इसमें सरकार का क्या दोष? क्या उन मजदूरों को खान-पान में स्वच्छता रखने के निर्देशों वाले केंद्र सरकार के पोस्टर नहीं दिखें थे? नहीं ही दिखे तो मरें ससुरे अपनी मौत, सरकार के पास और तमाम काम हैं!

सरकार के बड़बोले वाणिज्य मंत्री अरुण जेटली, जो हमेशा ही विदेशी कंपनियों को सबकुछ बेचने के लिये हड़बड़ाये रहते हैं, कहते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में चाय की घटती कीमतों और निरंतर बढ़ते लागत व्यय की वजह से चाय उद्योग की हालत खस्ता है। कहने का मतलब यह कि अंतर्राष्ट्रीय मंदी की वजह से मजदूरों की दुर्दशा लाजिमी है; लेकिन उनका ध्यान इस तथ्य पर क्यों नही जाता कि इस मंदी के लिये अपना खून-पसीना एक करने वाले मजदूर तो जिम्मेदार नहीं हैं, फिर क्यों उनके बच्चों को भूख से तड़पने के लिये छोड़ दिया गया है?

दूसरे, अगर यह दुर्दशा चाय उद्योग की होती तो मजदूरों के साथ इन चाय बागानों के मालिकान भी भूख से मरते। पर ऐसा नहीं है, क्योंकि यह समस्या सिर्फ और सिर्फ मजदूरों की है। मालिक तो पहले से ही मजदूरों का खून चूस-चूसकर मोटे हो चुके थे, अब सरकार भी मजदूरों को राहत पहुंचाने की बजाय चाय उद्योग के पुनरुद्धार पैकेज के नाम पर पूंजीपतियों को ही सहायता और ऋण के रूप में ब्याज सब्सिडी दे रही है। इसका सीधा मतलब यह कि सरकार मानती है कि चाय उद्योग के फिर से चल निकलने पर इन मजदूरों की हालत में सुधार आयेगा। पर क्या हमारी जनकल्याणकारी (!), राष्ट्रवादी(?) सरकारों को यह नहीं सूझता कि जब ये चाय बागान चल रहे थे तब भी इनकी हालत ऐसी ही क्यों थी? बरसों-बरस इन बागानों में खटने के बाद भी मजदूरों को खाद्य सुरक्षा, शिक्षा, स्वास्थ्य और आवास जैसी बुनियादी एवं न्यूनतम गारंटियां क्यों नहीं मिल सकीं? क्या गारंटी है कि जिस भूमण्डलीकरण और आर्थिक मंदी की दुहाई देकर मजदूरों की बदहाली और भुखमरी को लाजिमी करार दिया जा रहा है, वह आगे नहीं जारी रहेगी। और क्या इससे यह चमत्कार हो जायेगा कि बरसों से मजदूरों का खून चूसने वाले पूंजीपतियों का हृदय परिवर्तन हो जायेगा।

जाहिर है कि ऐसा कुछ भी नहीं होने जा रहा। यह पूंजीवादी व्यवस्था खुले तौर पर मानवद्रोही हो चुकी है और शोषित-उत्पीड़ित, मेहनतकश जनता को अब इससे किसी भी प्रकार की राहत की उम्मीद छोड़ ही देनी चाहिये। हमें यह बात निश्चित रूप से माननी पड़ेगी कि इस मानवद्रोही व्यवस्था में सुधारों के इस फर्जीवाड़े से अंततः हमारा कुछ भी भला नहीं होने वाला, बल्कि ये तो पूंजीपतियों के मुनाफे को बढ़ाकर उनकी चर्बी मुटाने के प्रयास मात्र हैं।

साम्राज्यवाद का टट्टू भी बोला : स्वास्थ्य सेवाएं अमीरों की सेवा में

बिगुल संवाददाता

नोएडा। ''भारत की स्वास्थ्य सेवाएं सिर्फ अमीर लोगों की ही सेवा करती हैं, ऐसा कहना है साम्राज्यवाद के टट्टू विश्व बैंक का। गरीब देशों की सरकारों द्वारा दी जाने वाले विश्व बैंक का ऐसा कहना है तो निश्चय ही हालात बहुत गम्भीर होंगे। विश्व बैंक का कहना है कि जहां भारत स्वास्थ्य पर सबसे कम खर्च करने वाले देशों में है वहीं जो थोड़ा बहुत सरकारी खर्च होता भी है उसे अमीर लोग हड़प लेते हैं। निजी क्षेत्र की सेवाओं की प्रशंसा करने वालों के मुंह पर यह जोरदार तमाचा है कि स्वास्थ्य के क्षेत्र में हर फीसदी निजी भागीदारी होने के बावजूद स्वास्थ्य सेवायें अत्यधिक महंगी और घटिया हैं जबकि श्रीलंका जैसे देश में जहां निजी क्षेत्र की भागीदारी सिर्फ 49 प्रतिशत है वहां सुविधाएं बेहतर हैं। भारत में निजी अस्पताल और नर्सिंग होम सिर्फ लोगों को लूटने के लिए होते हैं। वहीं स्वास्थ्य सेवा के उपभोक्ताओं की कोई सुनवाई नहीं होती। निजी सेवाओं के नियमन की व्यवस्था नहीं होने से हर तरफ मनमानी का वातावरण व्याप्त है। सरकारी उदासीनता के कारण निजी सेवाओं के घटिया होने के बावजूद लोग वहां जाने के लिए मजबूर हैं। इन सबके बावजूद विश्व बैंक यह सुझाव देने से बाज नहीं आया कि निजी क्षेत्र की सेवाओं को दुरुस्त करने के लिए कोई सरकारी नियामक व्यवस्था नहीं बनानी चाहिए।

निजी क्षेत्र द्वारा स्वास्थ्य के क्षेत्र में जारी लूट का एक पहलू एड्स और इसको केन्द्र में रखकर की जाने वाली गतिविधियां भी हैं। देश की सरकार द्वारा भी एड्स के प्रति जागरूकता लाने के लिए प्रचार-प्रसार पर अरबों का खर्च किया जा रहा है और इसका फायदा एनजीओ और निजी कम्पनियां उठा रही हैं। मजे की बात यह है कि एड्स मरीजों से ज्यादा संख्या एड्स एक्टिविस्टों की है। इस बीमारी को लेकर तरह-तरह के भ्रामक प्रचार भी किये जा रहे हैं जबकि सच्चाई यह है कि तीसरी दुनिया के देशों में कुपोषण और भुखमरी की वजह से ज्यादा लोगों की मौत होती है न कि एड्स से। यौन व्यभिचार की अपेक्षा चिकित्सा क्षेत्र में व्याप्त दुरव्यवस्था ज्यादा संक्रमण फैलाती है। दवा कम्पनियां एड्स की दवाओं द्वारा गरीब देशों के लोगों पर गुपचुप तरीके से प्रयोग करती हैं, क्योंकि इन देशों में ऐसे कानून नहीं हैं जो लोगों के पक्ष में इन कम्पनियों के खिलाफ कार्रवाई कर सकें। ऐसी दवायें भविष्य में अनेक प्रकार के संकट उत्पन्न कर सकती हैं।

विश्व बैंक जैसी संस्थाओं का दोहरा चरित्र इस रूप में सामने आ जाता है कि जहां यह स्वास्थ्य में सरकारी भागीदारी कम होने का रोना रोती है वहीं एड्स के नाम पर अरबों डालर खर्च कर गरीब देशों की जनता की मूलभूत आवश्यकताओं से मुंह मोड़ लेती हैं। आम जनता को इन संस्थाओं की नैतिकता को समझना चाहिए तथा इनके दोरंगेपन को पहचानते हुए इनके झांसे में आने से बचना चाहिए।

साम्राज्यवादी डाकुओं की बढ़ती लूट,
देशी सरमायेदारों की फूलती थैलियां,
मेहनतकशें की बढ़ती तबाही,
बेरोजगारी, आसमान छूती मंहगाई,
छंटनी-तालाबंदी, तबाही-बर्बादी,
काले कानून, लाठी-गोली का प्रजातंत्र,
बिकता न्याय,
अराजकता, लूटपाट, गुण्डागर्दी,
दलाली, कमीशनखोरी, भ्रष्टाचार,
मण्डल-कमण्डल, दंगे-फसाद,
भ्रष्ट सरकार, झूठी संसद, नपुंसक विरोध
इनसे निजात पाने की राह क्या है?

इलेक्शन या इंकलाब?

सच्चा ज्ञान क्या है?

माओ त्से-तुङ

ज्ञान क्या है? जब से वर्ग-समाज बना है दुनिया में सिर्फ दो ही प्रकार का ज्ञान देखने में आया है-उत्पादन के संघर्ष का ज्ञान और वर्ग-संघर्ष का ज्ञान। प्राकृतिक विज्ञान और सामाजिक विज्ञान उक्त दो प्रकार के ज्ञान का निचोड़ हैं तथा दर्शनशास्त्र प्रकृति संबंधी ज्ञान और सामाजिक ज्ञान का सामान्यीकरण और समाकलन है। क्या ज्ञान की और भी कोई किस्म है? नहीं। अब हम एक नजर उन विद्यार्थियों पर डालें जिनकी शिक्षा-दीक्षा उन स्कूलों में हुई है जो समाज की व्यावहारिक कार्रवाइयों से बिलकुल कटे हुए हैं। उनकी क्या हालत है? एक व्यक्ति इस प्रकार के प्राथमिक स्कूल से क्रमशः इसी प्रकार के विश्वविद्यालय में जाता है, स्नातक बन जाता है और यह समझ लिया जाता है कि उसके पास ज्ञान का भण्डार है। लेकिन जो कुछ भी उसने हासिल किया है वह केवल किताबी ज्ञान ही है। उसने अभी तक किसी भी व्यावहारिक कार्रवाई में हिस्सा नहीं लिया अथवा उसने जो कुछ सीखा है उसे जीवन के किसी क्षेत्र में लागू नहीं किया। क्या ऐसे व्यक्ति को पूर्ण रूप से विकसित बुद्धिजीवी समझा जा सकता है? मेरी राय में ऐसा समझना मुश्किल है क्योंकि उसका ज्ञान अभी तक अपूर्ण है। तब अपेक्षाकृत रूप से पूर्ण ज्ञान आखिर क्या है? समस्त अपेक्षाकृत पूर्ण ज्ञान तक पहुंचने की दो अवस्थाएं होती हैं : पहली अवस्था इंद्रियग्राह्य ज्ञान की अवस्था है और दूसरी अवस्था बुद्धिसंगत ज्ञान की; बुद्धिसंगत ज्ञान इंद्रियग्राह्य ज्ञान की उच्चस्तरीय विकसित अवस्था है। विद्यार्थियों का किताबी ज्ञान किस प्रकार का ज्ञान है? अगर यह मान भी लिया जाए कि उनका तमाम ज्ञान सत्य है, तो भी यह ज्ञान ऐसा नहीं है जिसे उन्होंने अपने व्यक्तिगत अनुभव से प्राप्त किया हो, बल्कि यह ज्ञान उन सिद्धांतों से मिलकर बना है जिन्हें उनके पुरखों ने उत्पादन के संघर्ष और वर्ग-संघर्ष के अनुभवों का निचोड़ निकालकर निर्धारित किया था। यह बहुत जरूरी है कि विद्यार्थी इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करें, लेकिन उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि जहां तक उनका अपना संबंध है, एक प्रकार से उनके लिए ज्ञान एकतरफा है, एक ऐसी चीज है जिसकी परख दूसरे लोगों ने तो कर ली है लेकिन उन्होंने खुद अभी तक नहीं की है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि इस ज्ञान को जीवन में और व्यवहार में लागू करने में निपुणता हासिल की जाए। इसलिए, मैं उन लोगों को जिन्होंने सिर्फ किताबी ज्ञान प्राप्त किया है और जिनका वास्तविकता से अभी वास्ता नहीं पड़ा, तथा उन लोगों को भी जिन्होंने थोड़ा-बहुत व्यावहारिक अनुभव प्राप्त कर रखा है, यह सलाह दूंगा कि वे अपनी कमियों को महसूस करें तथा कुछ और विनम्र बनें।

जिन्होंने सिर्फ किताबी ज्ञान प्राप्त किया है उन्हें सच्चे मायने में बुद्धिजीवी कैसे बनाया जा सकता है? इसका सिर्फ एक ही तरीका है कि वे व्यावहारिक कार्य में भाग लें और व्यावहारिक कार्यकर्ता बनें तथा जो लोग सैद्धांतिक कार्य में लगे हुए हैं वे महत्वपूर्ण व्यावहारिक समस्याओं का अध्ययन करें। इस प्रकार हम अपने उद्देश्य में सफल होंगे।...

...हमारी पार्टी को बहुत बड़ी संख्या में ऐसे साथियों की जरूरत है जो यह सीखें कि यह काम कैसे किया जाना चाहिए। हमारी पार्टी में बहुत से साथी ऐसे हैं जो इस प्रकार का सैद्धांतिक अनुसंधान-कार्य करना सीख सकते हैं; उनमें से अधिकांश लोग समझदार और होनहार हैं और हमें उनकी कद्र करनी चाहिए। लेकिन उन्हें सही उसूलों पर चलना चाहिए और अतीत की गलतियों को दोहराना नहीं चाहिए। उन्हें कठमुल्लावाद का परित्याग कर देना चाहिए और अपने आपको पुस्तकों में लिखित वाक्यांशों तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए।

दुनिया में सिर्फ एक ही किस्म का सच्चा सिद्धांत होता है-वह सिद्धांत जो वस्तुगत यथार्थ से निकाला गया हो और वस्तुगत यथार्थ की कसौटी पर परखा जा चुका हो; हमारी समझ में और कोई चीज सिद्धांत कहलाने लायक नहीं है। स्तालिन ने कहा है कि व्यवहार से संबंध न रखने वाला सिद्धांत निरुद्देश्य सिद्धांत हो जाता है।[3] निरुद्देश्य सिद्धांत व्यर्थ और मिथ्या होता है और उसे त्याग देना चाहिए। जो लोग निरुद्देश्य सिद्धांत बघारते हैं, हमें उनकी ओर तिरस्कार से उंगली उठानी चाहिए। मार्क्सवाद-लेनिनवाद अत्यंत सही, अत्यंत वैज्ञानिक और अत्यंत क्रांतिकारी सत्य है जो वस्तुगत यथार्थ से पैदा हुआ है और जिसे वस्तुगत यथार्थ की कसौटी पर परखा जा चुका है; लेकिन बहुत से लोग, जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद का अध्ययन करते हैं, उसे निष्प्राण कठमुल्ला-सूत्र समझते हैं, और इस तरह वे सिद्धांत के विकास को अवरुद्ध कर देते हैं और अपने को तथा दूसरे साथियों को नुकसान पहुंचाते हैं।

दूसरी तरफ, अगर हमारे उन साथियों ने, जो व्यावहारिक कार्य में लगे हुए हैं, अपने अनुभव का दुरुपयोग किया तो वे भी नुकसान उठाएंगे। यह सच है कि उनका अनुभव प्रायः बड़ा ही समृद्ध होता है, जो हमारे लिए अत्यंत मूल्यवान है। लेकिन अगर वे अपने ही अनुभव से संतुष्ट बने रहें, तो यह बहुत ही खतरनाक बात होगी। उन्हें महसूस करना चाहिए कि उनका ज्ञान अधिकांशतः इंद्रियग्राह्य और आंशिक होता है और उनमें बुद्धिसंगत तथा सम्पूर्ण ज्ञान का अभाव होता है; दूसरे शब्दों में, उनमें सिद्धांत का अभाव होता है और उनका ज्ञान भी अपेक्षाकृत रूप से अपूर्ण होता है। अपेक्षाकृत रूप से पूर्ण ज्ञान के बगैर, क्रांतिकारी कार्य को भलीभांति कर पाना असंभव है।

('पार्टी की कार्यशैली में सुधार करो' का एक अंश)

नयी दुनिया निठल्ले चिन्तन से नहीं, जन महासमर से बनेगी!

(पेज 1 से आगे)

कार्यक्रम जिनमें दुनिया में मौजूद हर प्रकार के अन्याय-शोषण-उत्पीड़न, पूंजी के हर प्रकार के वर्चस्व के रूपों और इंसान द्वारा इंसान को अधीन बनाने के हर प्रकार के रूपों पर 'गहन चिन्तन-मनन' हो रहा था। चिन्तन-मनन, चिन्तन-मनन, और चिन्तन-मनन...। यही इब्तिदा और यही इन्तेहां। इसलिए, क्योंकि डब्ल्यूएसएफ कोई सामूहिक कार्रवाई करने का मंच तो है नहीं। यह तो बस विभिन्न प्रकार के विचारों के बीच जनतांत्रिक ढंग से गलचौर करने के लिए स्पेस प्रदान करता है।

बौद्धिक दुनिया की अन्तरराष्ट्रीय ग्लैमरस हस्ती अरुंधती राय ने अपने उद्घाटन भाषण में बस एक छोटी सी सामूहिक कार्रवाई के लिये आह्वान किया था लेकिन उसपर किसी ने कान तक नहीं दिया। बस एक छोटी सी कार्रवाई कि इराक के 'पुनर्निमार्ण' के कामों का ठेका लेने वाली एक-दो अमेरिकी कंपनियों को चुनकर दुनिया भर में उनके दफ्तरों का पीछा किया जाये और उन्हें शटर गिराकर भाग जाने पर मजबूर किया जाये। शायद अरुंधती राय अपने मासूम (?) भावावेश में डब्ल्यूएसएफ के चार्टर को लांघ गई। उन्होंने सड़क पार 'मुम्बई प्रतिरोध' वाले लोगों का भी आह्वान किया कि आइये डब्ल्यू एस एफ के साथ मिलकर हम साझा कार्रवाई करें। गौरतलब है कि अरुंधती राय डब्ल्यूएसएफ के आयोजन की उद्घाटक वक्ता थीं और साथ ही मुम्बई प्रतिरोध के सांस्कृतिक कार्यक्रम की भी उद्घाटनकर्ता थीं। उन्होंने मुम्बई प्रतिरोध के एक सत्र में इराक पर एक पर्चा भी पढ़ा।

अरुंधती राय का साझा कार्रवाई का यह प्रस्ताव डब्ल्यूएसएफ के प्रति *मुम्बई प्रतिरोध-2004* के रुख की कमजोरी को उजागर कर देता है। दरअसल, डब्ल्यूएसएफ के मंसूबों को बेनकाब करने के लिए जरूरत एक प्रतिरोधी आयोजन की थी, न कि समांतर आयोजन की। इस नजरिए से देखा जाये तो दादर में 19-20 जनवरी को *'साम्राज्यवाद के विरुद्ध जनता,* के बैनर तले आयोजित दो दिवसीय सम्मेलन भागीदारी के लिहाज से छोटा आयोजन होते हुए भी महत्वपूर्ण और अधिक कारगर था। इस सम्मेलन ने 'डब्ल्यूएसएफ को बेनकाब करो' का नारा दिया और पुरजोर ढंग से यह उभारा कि भूमण्डलीकरण का चेहरा मानवीय नहीं बनाया जा सकता और यह कि साम्राज्यवाद-पूंजीवाद को सिर्फ तबाह किया जा सकता है और 'समाजवाद ही एकमात्र विकल्प है।'

बहरहाल, डब्ल्यूएसएफ के चार्टर के अनुसार ही साम्राज्यवादी भूमण्डलीकरण विरोधी विभिन्न विचारों के 'महासंगम' की एक अनुपम छटा मुम्बई में देखने को मिली। गांधीवादी सुधारवादियों से लेकर एनजीओ सुधारकों तक, दूसरे इण्टरनेशनल वाले काउत्स्की के समाजवादी चेलों से लेकर चौथे इण्टरनेशनल वाले त्रात्सकीपंथियों तक और दुनिया भर के सामाजिक जनवादियों, (संसदीय वामपंथी) तरह-तरह के पहचान आंदोलनों के नुमाइन्दे और दुनिया के कुछेक ''बेहतरीन दिमाग'' (अरुंधती राय की शब्दावली में) इस महाचौपाल में 'भूमण्डलीकरण को मानवीय चेहरा देने' के लिए छह दिनों तक मगजमारी करते रहे। इस मगजमारी से निकला फकत यह कि इस चिन्तन-आयोजन को समूचे भूमण्डल पर फैलाया जाये-हर साल दुनिया के अलग-अलग उन हॉट-स्पॉट्स (जनाक्रोश की धधकती भट्ठियों) पर जिनके फ्लैश प्वांइट्स (जनाक्रोश के विस्फोट) बनने की सर्वाधिक संभावनाएं हों। साम्राज्यवाद के विरोध के नाम पर साम्राज्यवाद की ऐसी बेहतरीन पैरोकारी और हिफाजत ''दुनिया के बेहतरीन दिमाग'' ही कर सकते हैं।

इतने सारे ''बेहतरीन दिमाग'' जिस मजमे में इकट्ठा हों, जहां जातिभेद, लिंग भेद, नस्ल भेद, राष्ट्रीय उत्पीड़न, बहुराष्ट्रीय कंपनियों की लूट, पर्यावरण की तबाही, बर्बर साम्राज्यवादी युद्धों से लेकर हर तरह की गैरबराबरी, वर्चस्व और अधीनता के हर रूपों के खिलाफ 'लड़ने' के बारे में गहन चिन्तन-मनन हो रहा हो, वहां इस सीधी-सादी सच्चाई पर निगाह न जाना कि 'भूमण्डलीय न्याय' और समता की दिशा में तब तक पहला कदम भी नहीं उठाया जा सकता जब तक पूंजीवादी-साम्राज्यवादी व्यवस्था का अस्तित्व मौजूद है, समझदारों की ओढ़ी गयी नासमझी के सिवा और क्या हो सकती है!

दरअसल, ये 'बेहतरीन दिमाग' भूमण्डलव्यापी अन्याय, असमानता और शोषण के अनेकानेक रूपों पर अलग-अलग चर्चा ही इसलिए करना और कराना चाहते हैं ताकि वर्गीय शोषण, अन्याय और असमानता, जिसकी बुनियाद पर अन्य सभी प्रकार की सामाजिक असमानताएं जनमती हैं, पर पर्दा डाला जा सके। डब्ल्यू एस एफ के उस्ताद दिमाग भूमण्डलव्यापी शोषण-उत्पीड़न, अन्याय-असमानता की सच्चाई को जानबूझकर लोगों को उस तरह दिखाना चाहते हैं जैसे किसी अंधे को हाथी दिखायी देता है। सूंड पकड़ में आये तो पाइप जैसा, पैर पकड़ में आये तो खम्भे जैसा और कान पकड़ में आये तो सूप जैसा। यानी समूचा हाथी एक साथ नहीं, जो अंग पकड़ में आ जाये उसी जैसा। समग्रता में नहीं, टुकड़ों-टुकड़ों में। उत्तर आधुनिकतावादी ढंग से विखण्डन करने पर सच्चाई इसी तरह दिखायी देती है। दुनिया को इसी ढंग से देखने और अलग-अलग उसे बदलने का यही उत्तर आधुनिकतावादी आग्रह डब्ल्यूएसएफ के 'बेहतरीन दिमाग' हमसे कर रहे हैं। मतलब साफ है कि डब्ल्यू एस एफ साम्राज्यवादी भूमण्डलीकरण का विरोध करने के लिए नहीं वरन उस विचार और उसपर आधारित राजनीतिक-सामाजिक व्यवहार का विरोध करने के लिए बनाया गया है जो सच्चाई को समग्रता में देखता है और इसी 'सर्वसमावेशी' नजरिये से दुनिया को बदलने की जद्दोजहद करता है। यह अनायास नहीं है कि डब्ल्यू एस एफ के चार्टर में एक विशेष धारा इस बारे में साफ तौर पर डाली गयी है जो हर प्रकार के सर्वसमावेशी और वर्ग 'न्यूनीकरणवादी' नजरिये की आलोचना करती है।

यह कहना सरासर झूठ है कि डब्ल्यू एस एफ विभिन्न अलग-अलग विचारों के बीच परस्पर जनतांत्रिक आदान-प्रदान का मंच है। दरअसल, डब्ल्यू एस एफ में शामिल अलग-अलग विचार और आंदोलन जाने या अनजाने एक ही चीज के विरोध में खड़े हैं-साम्राज्यवादी भूमण्डलीकरण के वास्तविक विकल्प के विरोध में। भमूण्डलीकरण को मानवीय बनाने की सारी कवायदें एक वास्तविक नयी दुनिया, जो केवल समाजवाद ही हो सकी है, के विरोध की एक साझा जमीन पर खड़ी हैं। इस सच्चाई को कमल मित्र चिनॉय (डब्ल्यूएसएफ के एक जोशीले हिमायती) ने आयोजन के दौरान दिये गये अपने एक बयान में बेलागलपेट ढंग से उजागर कर दिया। उन्होंने कहा कि डब्ल्यूएसफ उन ताकतों को एक मंच पर लाने की कोशश है जो हिंसात्मक तरीके के बजाय शान्तिपूर्ण ढंग से सामाजिक बदलाव में यकीन रखते हैं। दरअसल इस बार आयोजन के कई प्रमुख कर्ता-धर्ता बेहद आक्रामक अंदाज में डब्ल्यूएसएफ के उद्देश्यों की हिफाजत करते दिखे। इसका कारण दुनिया भर में सच्ची क्रान्तिकारी जनवादी ताकतों द्वारा साम्राज्यवाद विरोध के इस छद्म के खिलाफ चलाया जा रहा अभियान है। अपनी हिफाजत में ही सही डब्ल्यूएसएफ के कर्ता-धर्ता लोगों के हमलावर तेवर भी इस बात की जरूरत को उभार रहे है कि डब्ल्यूएसफ के प्रति कोई भी नरम रवैया उसके प्रति भ्रमों को बढ़ाने के सिवा दूसरा काम नहीं करेगा।

नर्मदा बचाओ आंदोलन की नेता मेधा पाटेकर एक इण्टरव्यू में इन शब्दों में डब्ल्यूएसएफ की हिफाजत करती हैं-''...अब हम सिर्फ पूंजीवाद से समाजवाद में जाने की बात नहीं कर सकते। हमें अपनी बात को इन दोनों प्रणालियों से आगे ले जाना होगा। नया समाजवाद समाजवाद के आसपास होगा पर उसमें पिछली कमियां नहीं होंगी। हम उसे नव-समाजवाद कह सकते हैं।''

मतलब साफ है। मेधा पाटकर का नव-समाजवाद पूंजीवाद-साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंककर कायम किया गया मेहनतकशों का समाजवाद नहीं होगा। इसमें कौन सी कमियां थीं, हालांकि इस पर इंटरव्यू में रोशनी नहीं डाली गयी है लेकिन यह अनुमान गलत नहीं होना चाहिए कि उनका इशारा सर्वहारा की वर्गीय तानाशाही से है। समाजवाद की इस 'नामुराद' चीज से मेधा जी ही नहीं समूचा पूंजीवादी-साम्राज्यवादी खेमा और सारी दुनिया के नागरिक समाज वाले भयाक्रांत रहते हैं। बल्कि सच तो यह है कि नागरिक समाज वालों को अगर सर्वहारा की तानाशाही और साम्राज्यवादी भूमण्डलीकरण के 'नवउदारवाद' में से किसी एक को चुनने की मजबूरी आन पड़े तो वे सर्वहारा की तानाशाही हरगिज नहीं चुनेंगे।

दरअसल, आज एक बार फिर से समूची पूंजीवादी-साम्राज्यवादी दुनिया को कम्युनिज्म का भूत उसी तरह सताने लगा है (आसन्न नहीं तो एक संभावनासंपन्न भूत के रूप में ही सही) जिस तरह 150 साल पहले यूरोप को सता रहा था। इसी लिए दुनिया भर से 'बेहतरीन दिमाग' वाले ओझा-गुनिया, मंत्र-तंत्र विद्या निपुण और झाड़-फूंक करने वाले हर साल इकट्ठा होते हैं और तरह-तरह की हिकमतों और तजवीजों के जरिये इस भूत को भगाने का जतन करते हैं। चार साल पहले पोर्तो अलेग्रे में भूमण्डलीकरण को मानवीय बनाने का मंत्रोच्चार संस्थाबद्ध रूप में शुरू हुआ था। भारत के इस पड़ाव के बाद अगला पड़ाव जरूर ही भूत की सर्वाधिक संभावना वाले इलाके में होगा।

नागरिक समाज वालों (एनजीओ वालों) को, सामाजिक जनवादियों को और साम्राज्यवादी-पूंजीवादी सरकारों को सर्वहारा की तानाशाही के भूत से कांपने दो। इस अशान्त दुनिया में भलेमानुषों को शांति की अर्जियां देने दो, क्योंकि सर्वहारा का हर सचेत सिपाही जानता है कि नयी दुनिया ओझाओं-सोखाओं की झाड़फूंक से नहीं बल्कि न टाले जा सकने वाले वर्ग महासमर से ही पैदा होनी है।

बकलमे–खुद

इस स्तम्भ के बारे में

इस स्तम्भ के अन्तर्गत हम जिन्दगी की जद्दोजहद में जूझ रहे मजदूरों और उनके बीच रहकर काम करने वाले मजदूर संगठनकर्ताओं- कार्यकर्ताओं की साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित करते हैं-कविताएं, कहानियां, डायरी के पन्ने, गद्यगीत आदि-आदि।

इस स्तम्भ की शुरुआत की एक कहानी है। 'बिगुल' के सभी प्रतिनिधियों-संवाददाताओं के अनुभव से यह जुड़ी हुई है। हमने पाया कि जो कुछ पढ़े-लिखे और उन्नत चेतना के मजदूर हैं, वे गोर्की की 'मां', उनकी आत्मकथात्मक उपन्यास-त्रयी और अन्य रचनाओं को तो बेहद दिलचस्पी के साथ पढ़ते हैं, प्रेमचंद उन्हें बेहद पसन्द आते हैं, आस्त्रोव्स्की की 'अग्निदीक्षा' और पोलेवेई की 'असली इंसान' ही नहीं, कुछ तो बाल्जाक और चेर्निशेव्स्की को भी मगन होकर पढ़ते हैं। लेकिन जब हम हिन्दी के आज के सिरमौर वामपंथी कथाकारों की बहुचर्चित रचनाएं उन्हें पढ़ने को देते हैं तो वे बेमन से दो-चार पेज पलटकर धर देते हैं। पढ़कर सुनाते हैं तो उबासी या झपकी लेने लगते हैं। यदि उन सबकी राय को समेटकर थोड़े में कहा जाये, तो इसका कारण यह है कि ज्यादातर वामपंथी-प्रगतिशील लेखक आज अपनी रचनाओं में आम आदमी की जिन्दगी की, संघर्ष और आशा-निराशा की जो तस्वीर उपस्थित कर रहे हैं, वह आज की जिन्दगी की सच्चाइयों से कोसों दूर हैं। वह या तो ट्रेनों-बसों की खिड़कियों से देखे गये गांवों और मजदूर बस्तियों का चित्र है, या फिर अतीत की स्मृतियों के आधार पर रची गयी काल्पनिक तस्वीर। नयेपन के नाम पर जो कला का इन्द्रजाल रचा जा रहा है, वह भी आम जनता के लिए बेगाना है। कारण स्पष्ट है। दरअसल इन तथाकथित वामपंथियों का बड़ा हिस्सा ''वामपंथी कुलीनों'' का है। ये ''कलाजगत के शरीफजादे'' हैं जो प्रायः प्रोफेसर, अफसर या खाते-पीते मध्यवर्ग के ऐसे लोग हैं जो जनता की जिन्दगी को जानने-समझने के लिए हफ्ते-दस दिन की छुट्टियां भी उसके बीच जाकर बिताने का साहस नहीं रखते। ये अपने नेहनीड़ों के स्वामी सद्गृहस्थ लोग हैं। ये गरुड़ का स्वांग भरने वाली आंगन की मुर्गियां हैं। ये फर्जी वसीयतनामा पेश करके गोर्की, लू शुन, प्रेमचंद का वारिस होने का दम भरने वाले लोग हैं। समय आ रहा है जब क्रान्तिकारी लेखकों- कलाकारों की एकदम नई पीढ़ी जनता की जिन्दगी और संघर्षों के ट्रेनिंग-सेण्टरों से प्रशिक्षित होकर सामने आयेगी। इन कतारों में आम मजदूर भी होंगे। भारत का मजदूर वर्ग आज स्वयं अपना बुद्धिजीवी पैदा करने की स्थिति में आ चुका है। भारत का यह नया बुद्धिजीवी मजदूर या मजदूर बुद्धिजीवी सर्वहारा क्रान्ति की अगली-पिछली पांतों को नई मजबूती देगा। आज परिस्थितियां ऐसी हैं कि हम अपेक्षा करें कि भारतीय मजदूर वर्ग भी अपना इवान बाबुश्किन और मक्सिम गोर्की पैदा करेगा। 'बिगुल' की कोशिश होगी कि वह ऐसे नये मजदूर लेखकों का मंच बने और प्रशिक्षणशाला भी।

इसी दिशा में, पहलकदमी जगाने वाली एक शुरुआती कोशिश के तौर पर इस स्तम्भ की शुरुआत की गयी है। मुमकिन है कि मजदूरों और मजदूरों के बीच काम करने वाले संगठनकर्ताओं की इन रचनाओं में कलात्मक अनगढ़ता और बचकानापन हो, पर इनमें जीवित यथार्थ की ताप और रोशनी के बारे में आश्वस्त हुआ जा सकता है। जिन्दगी की ये तस्वीरें सच्ची वामपंथी कहानी का कच्चा माल भी हो सकती हैं। और फिर यह भी एक सच है कि हर नयी शुरुआत अनगढ़-बचकानी ही होती है। लेकिन मंजे-मंजाये घिसे-पिटे लेखन से या काल्पनिक जीवन-चित्रण के उच्च कलात्मक रूप से भी ऐसा अनगढ़ लेखन बेहतर होता है जिसमें जीवन की वास्तविकता और ताजगी हो। हमारा यह अनुरोध है कि मजदूर साथी अपनी जिन्दगी की क्रूर-नंगी सच्चाइयों की तस्वीर पेश करने के लिए अब खुद कलम उठायें और ऐसी रचनाएं इस स्तम्भ के लिए भेजें। साथ ही प्रकाशित रचनाओं पर अपनी प्रतिक्रिया भी भेजें।

इस अंक में हम एक मजदूर मानस कुमार *की कहानी छाप रहे हैं।*

-सम्पादक मण्डल

नये साल की छुट्टी

मानस कुमार

आम तौर पर सूखे और उदास दिखने वाले मजदूरों के चेहरे उस दिन खिले हुए थे। नया साल जो आया था। हालांकि यह खुशी नया साल आने की उतनी नहीं थी, जितनी इस बात से थी कि साल के पहले दिन की तरह आज दूसरे दिन भी एक तरह से छुट्टी ही थी। हालांकि वे आज कम्पनी आये हुए थे, पर काम करने नहीं, बस मालिक का भाषण सुनने। भाषण के बाद छुट्टी हो जानी थी।

मजदूरों की यह खुशी उन कोल्हू के बैलों की खुशी थी जिन्हें किसी कारणवश एक दिन कोल्हू में न जोता गया हो। ऐसे शुभ दिन वे खुशी के मारे उछलकूद करते हैं, कुलांचे भरते हैं और रह-रह कर एक-दूसरे को चूमते-चाटते हैं।

नये साल के ऐसे ही शुभ अवसर पर कम्पनी में काम करने नहीं, बस मालिक का भाषण सुनने आये मजदूर एक-दूसरे को तरह-तरह से शुभकामनाएं दे रहे थे। कुछ हाथ मिलाकर तो कुछ गले मिलकर। इसके अलावा कुछ मजदूर आपस में हंसी-मजाक भी कर रहे थे। कुछ मजदूर एक जगह इकट्ठे होकर बारी-बारी से फिल्मी गाने गा रहे थे। एक टोली के मजदूर एक ऐसी मशीन को हाथ में उठाये हुए थे जिसकी आकृति माइक जैसी थी। उसके पीछे बिजली के तार से थोड़ी सी मोटी हवा फूंकने की पाइप जुड़ी हुई थी। बारी-बारी से मजदूर उसे मुंह के सामने लाते और कुछ चुटकुले या शेरो-शायरी सुना कर हंसते तथा तालियां बजाते। गीत गाने वाली टोली चुटकुले सुनाने वाली टोली से ज्यादा जोर से हंस और तालियां बजा रही थी। कुछ देर बाद चुटकुले व शेरो-शायरी कहने वाली टोली गीत गाने वाली टोली में मिल गयी। देखते-देखते कम्पनी के सारे मजदूर वहीं इकट्ठे हो गये। हर चेहरे पर हंसी-खुशी की वजह थी। आज उनके कंधे से दिन-रात मेहनत करने वाला जुआ उतरा जो हुआ था।

मजदूरों की यह खुशी कम्पनी का जी.एम. सहन नहीं कर पाया। थोड़ी देर बाद वह घूमता हुआ मजदूरों की गीत गाती हुई टोली के पास आया। पहले उसने गीत का आनन्द लिया, फिर टोली को तितर-बितर कर दिया। जी.एम. ने आदेश दिया कि सभी अपनी-अपनी काम की जगह पर चले जाओ। मजदूरों के चेहरे फिर से उदास हो गये और वे अपने-अपने काम पर चले गये।

फैक्टरी की छत पर मालिक के भाषण का इंतजाम किया जा रहा था। लाइनों में कुर्सियां बिछाई गईं। इन पर कम्पनी के स्टाफ को बैठना था। दूसरी तरफ टाट व दरी बिछाई गई, जिन पर मजदूरों को बैठना था। सामने गद्दे वाली कुर्सियां, मेज तथा मेज पर फूलों का गुलदस्ता रखा गया। पास में एक छोटी मेज पर दिया जलाने वाला स्टैण्ड रख दिया गया। उसके तीन तरफ कांच की दीवार खड़ी कर दी गयी ताकि जब दीयों को जलाया जाये तो हवा लग कर बुझ न जाये। गद्दवाली कुर्सियों पर उन रेंगते हुए, पिलपिले, तोंदियल, परजीवी कीड़ों (फैक्टरी मालिकों) को बैठना था।

दोपहर बाद मजदूर ऊपर आकर बिछाये गये टाट-दरी पर बैठकर मालिक का इंतजार करने लगे। बड़े आफिसर मैनेजर मालिक के स्वागत के लिए भाग-दौड़ करने लगे। सीढ़ियों से लेकर कुर्सियों तक कालीन बिछाई गई ताकि उन परजीवियों के पैरों में पक्के फर्श पर चलने से कोई तकलीफ न हो जाये। रास्ते में दोनों तरफ बड़े-बड़े फूलों के गुलदस्ते रखे गये। जब मालिकों की गाड़ियां फैक्टरी के अन्दर पहुंचीं तो मैनेजमेंट में और ज्यादा खलबली मच गई। हर छोटी से छोटी चीज को सही ढंग से व्यवस्थित करने लगे। बड़े ओहदे के मैनेजर दौड़कर मालिकों की गाड़ियों के पास एक दूसरे के पीछे दौड़ते हुए पहुंचे। उनके बीच इस बात की होड़ लगी थी कि दूसरा मैनेजर मेरे से पहले मालिकों को सलाम ठोंक दे। गाड़ियों से कुछ आदमी उतरे। दो फैक्टरी मालिक, दो उनके लड़के और दो उनके चीफ। इन मालिकों की कुल 7, 8 फैक्टरियां हैं। ये दोनों चीफ सभी फैक्टरियों के मैनेजरों के ऊपर हैं और उनकी देखरेख करते हैं।

सलाम ठोंकने के लिए मची भगदड़ को मालिकान ने निर्विकार भाव से देखा। आखिरकार सभी मैनेजरों ने आगे-पीछे सलाम ठोंकी। फिर वे मालिकान के पीछे-पीछे चलने लगे। सभी छत पर पहुंचे। सबसे आगे मालिक, उनके पीछे उनके लड़के, तीसरे नम्बर पर चीफ, सबसे पीछे मैनेजर तथा आफिसर थे। वे सभी दुलहन सी नपी-तुली चाल में लेकिन थोड़ी अकड़ के साथ चलते हुए आये। फोटोग्राफर कभी सामने से, कभी दायें तथा कभी बायें से फोटो खींचता हुआ चल रहा था। साहब लोगों के सभा में पहुंचते ही कुर्सियों पर बैठा फैक्टरी का अन्य स्टाफ व सभी मजदूर स्वागत के लिए उठ खड़े हुए। पहले कुर्सियों पर मालिक बैठे फिर उन्होंने मजदूरों की तरफ बैठने का इशारा किया। सभी लोग अपने-अपने स्थान पर बैठ गये। इतने में एक सुअर जैसा चर्बीला तोंदियल आदमी (एक आफिसर) अलग से माइक लेकर और कुछ कागज हाथ में लिये हुए आगे आया। वही कागज पढ़कर बोलने लगा। ''मैं एम.डी. साहब से प्रार्थना करता हूं कि बारी-बारी से आयें और दीपक जलाकर नये वर्ष की शुभकामनाएं दें।'' सबसे पहले बड़ा मालिक फिर दोनों लड़के तथा दोनों चीफ सभी ने दो-दो दीपक जलाये और मजदूरों ने तालियां बजायीं। सभी अपने-अपने स्थान पर बैठ गये। इसके बाद तोंदियल आफिसर ने दो महिला मजदूरों व चार पुरुष मजदूरों को आगे बुलाया और मालिकों को फूलों का गुलदस्ता भेंट करने का आदेश दिया। महिला मजदूरों ने दोनों मालिकों और पुरुष मजदूरों ने दोनों लड़कों और चीफों को गुलदस्ते दिये। इसके बाद मोटे आफिसर ने फिर से बोलना शुरू किया।

''मैं चीफ साहब गर्ग जी से गुजारिश करता हूं कि मंच पर आकर अपने विचार रखें।'' स्टेज संचालक मोटा आफिसर अपने स्थान पर पहुंच गया। चीफ खड़ा होकर बोलने लगा। ''सबसे पहले मैं अपनी तरफ से तथा डायरेक्टर खन्ना साहब की तरफ से फैक्टरी के सभी मजदूरों को नये वर्ष की शुभ कामनाएं देता हूं। आने वाला वर्ष सबके लिए मंगलमय हो।'' फिर वह अपने हाथ में लिए हुए कागज को पढ़ने लगा। ''साथियो, आप सभी ने अबकी बार बहुत मेहनत और लगन से काम किया है। कम्पनी ने पहले से बहुत ज्यादा प्रगति करी है। अक्टूबर माह में 6 करोड़ का फायदा हुआ।'' यह सुनते ही मजदूरों ने जोर-जोर से तालियां बजाई। ''नवम्बर माह में 7 करोड़ का फायदा हुआ। इतना फायदा पहले कभी नहीं हुआ, अबकी बार तो रिकार्ड कायम किया है।'' मजदूर और भी जोर से तालियां बजाने लगे। खुशी के मारे चेहरे लाल हो रहे थे। उनकी मेहनत जो थी। परन्तु सबसे ज्यादा खुशी इस बात की थी कि सभी मजदूर यह सोच रहे थे कि अबकी बार तो हमें भी कुछ मिलेगा। हमारी तनख्वाह बढ़ाई जायेगी। इस महंगाई में कुछ गुजारा तो चल सकेगा। चीफ ने अपना कागज मोड़कर जेब में डाला तथा बोलने लगा। ''आप लोगों ने मेहनत तो की है परन्तु इसमें ज्यादा खुश होने की जरूरत नहीं है। हमने इसी में संतोष नहीं रखना है। हमने तो काफी आगे बढ़ना है बहुत ऊंची छलांग लगानी है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि सीधे ही आसमान पर पहुंच जाओ! नहीं, रास्ते में मजबूत सीढ़ियों की जरूरत है और वे सीढ़ियां हैं आपकी मेहनत, लगन, स्वच्छता-मतलब काम में सफाई। मैं पिछले दिनों ऋषि खन्ना जी के साथ कोरिया गया था। मैंने देखा वहां के मजदूरों के काम में सफाई तुम से ज्यादा, लगन तुम से ज्यादा, मेहनत और ईमानदारी भी तुमसे ज्यादा। जबकि उनकी तनख्वाह तुम्हारे से ज्यादा नहीं, केवल तुम्हारे जितनी ही थी। इसलिए आप लोगों को और भी मेहनत तथा लगन से काम करने की जरूरत है। बस अब मैं अपनी बात खत्म करता हूं।''

मजदूर उसकी बात सुनकर सन्न रह गये और एक-दूसरे का चेहरा देखने लगे। इसके बाद मंच संचालक ने फिर मंच संभाला। फैक्टरी मालिक को मंच पर आकर अपने विचार रखने के लिए आमंत्रित किया। वह लम्बी-चौड़ी कद-काठी का आदमी था जिसका दयनीय और लाल चेहरा था। वह खड़ा होकर माइक के पास आया। माइक उसके मुंह से कुछ नीचे था। माइक आपरेटर ने उसे कुछ ऊपर किया, ठीक उसके मुंह के पास। अब वह बोलने लगा। ''तुम लोगों ने मेहनत और लगन से जो काम किया है मैं उसका धन्यवाद करता हूं। गर्ग जी ने अभी और मेहनत से, लगन से, सफाई तथा श्रेष्ठता से काम करने की जो बात कही है वह सही है। यह भी सही है कि अभी हमने संतोष नहीं रखना है, हमें तो काफी आगे बढ़ना है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि बहुत ज्यादा मेहनत की जरूरत है। नहीं, बस थोड़ी सी और ज्यादा मेहनत की जरूरत है। आप तो जानते ही हैं कि विदेशी कम्पनियां यहां बहुत सी आ गई हैं। कम्पनियों में आगे बढ़ने की आपस में होड़ लगी हुई है। ऐसे समय में छोटी कम्पनी बड़ी के सामने टिक नहीं पा रही है। भले ही आप और हम किसी से कमजोर नहीं हैं, हमारा सारा माल विदेशों में जाता है। और मांग भी बनी रहती है, अच्छी पोजीशन है हमारी। परन्तु हमने यह नहीं समझकर बैठ जाना है कि हम ताकतवर हैं बल्कि हमने अपने को कमजोर समझकर काम करना है, मेहनत करनी है। हमारा केवल मुकाबले में डटे रहने का ही मकसद नहीं है। बल्कि दो कदम आगे बढ़ना है। हम आगे कैसे बढ़ सकते हैं? मेहनत, लगन, स्वच्छता, श्रेष्ठता से, ईमानदारी से।

क्या आपको श्रेष्ठता का मूल मंत्र याद है, जो हमने आपके काम करने की जगहों पर बैनर बनवाकर लगवा रखे हैं। मैं उसे तुम्हारे सामने फिर दोहरा देता हूं। ''श्रेष्ठता क्या है : हर काम में एकात्मता, हर काम में लगन।

श्रेष्ठता क्यों : श्रेष्ठता में सम्मान, श्रेष्ठता में सफलता। श्रेष्ठता में सम्पत्ति।

श्रेष्ठता कैसे : हर काम में लगन, हर काम में ईमानदारी, व्यवहार में मधुरता, वाणी में माधुर्य। (श्रेष्ठता लाओ, खुशहाली पाओ)

कार्य को हर समय, हर वक्त करते रहने

(पेज 11 पर जारी)

(पेज 10 से आगे)

की आदत डालनी चाहिए।

"यह है श्रेष्ठता का मूलमंत्र। हमारा काम है समझाना।

"और तुम्हारा काम है समझना तथा उसे अपने पर लागू करना। आज नये साल का दूसरा दिन है। कल एक तारीख की छुट्‌टी थी और आज भी तुम घर जल्दी चले जाओगे। हमें पता है, तुम हर रोज देर रात घर जाते हो और सुबह होते ही कम्पनी आ जाते हो। तुम्हें जरा सा भी कुछ सोचने-समझने का टाइम नहीं मिलता, मुझे अच्छी तरह पता है। तुम खाना भी बड़ी मुश्किल से खा पाते होगे, थककर बिस्तर पर लेट जाते होगे। मुझे पता है। परन्तु आज तो तुम्हारे पास समय है। शाम को बैठकर मेरी बात पर विचार करने का, मेरी बात पर अमल करने का। मेरी तुम सभी से प्रार्थना है कि मेरे कहने से तुम आज बैठकर सोचना कि हमारी कम्पनी आगे कैसे बढ़ सकती है? माल ज्यादा तैयार कैसे हो सकता है? काम में सफाई कैसे आ सकती है। हमारी समस्या तुम सभी की समस्या है, कम्पनी की समस्या है, स्टेट की समस्या है और देश की समस्या है, देश का नुकसान है। अगर फायदा है तो कम्पनी का फायदा है, स्टेट का फायदा है, देश का फायदा है। इसलिए आप मेरे कहने पर सोने से पहले जरूर सोचना कि समस्या का हल क्या हो? बस फिर क्या है, हम आगे बढ़ते जायेंगे, कम्पनी आगे बढ़ेगी, स्टेट आगे बढ़ेगी, देश आगे बढ़ेगा, देश का नाम होगा। मैं तुम्हें एक उदहारण दे रहा हूं। बात सच है, हो सकता है कि मेरी बात से तुम्हारे दिमाग पर अच्छा प्रभाव पड़े और मेरी बात मान लो। "पिछले दिनों मैं इजरायल गया था। वह यहूदियों का छोटा सा देश है। उसकी कुल जनसंख्या दिल्ली की जनसंख्या के बराबर है। वहां न तो पानी है न कोई खेती करने का अच्छा साधन। धरती भी इतनी उपजाऊ नहीं। वे लोग लकड़ी बेचकर अपना गुजारा करते थे। वहां विज्ञान ने भी इतनी तरक्की नहीं करी। परन्तु आज वही दुनिया का पहला ऐसा देश है जो विदेशों में रंग-बिरंगे फूलों का निर्यात करता है। वह अब दुनिया के लिए एक तोहफा है। उसके पास क्या था-सिर्फ आत्मविश्वास, मेहनत और लगन। देश को आगे बढ़ाने की भूख थी। तुम्हें अन्दर भी उसी तरह की भूख की जरूरत है।

"वहां पर हमारी 200 आदमियों की एक मीटिंग हुई जिसमें अलग-अलग देशों के लोग थे। वहां एक बात चल पड़ी। मीटिंग में बैठे हुए आदमियों से पूछा गया कि आप लोगों को किस देश के पदार्थ (माल) ज्यादा पसन्द हैं और कितने लोगों को पसन्द है। अमेरिका का नाम लिया गया। 60 आदमियों के हाथ ऊपर उठे। चीन का नाम लेने पर 150 लोगों के हाथ ऊपर रहे। जापान की बारी आयी, पूरे 200 के 200 आदमियों के हाथ ऊपर खड़े हुए। पर जब भारत का नाम लिया गया तो एक भी आदमी का हाथ नहीं उठा। जानते हो क्यों? क्योंकि यहां और देशों जैसी तरक्की नहीं है। यहां के लोग पढ़-लिखकर वैज्ञानिक बनकर विदेशों में चले जाते हैं। उनको विदेशियों ने खरीद लिया है। भारत के लोग वहां जाकर नई-नई खोज करते हैं। नाम विदेशों का होता है। अरे, भारत तो वह देश है जो औरों को सिखाता है। क्यों नहीं भारत के लोग भारत में ही रहकर काम करें। नई-नई खोज यहां पर ही करें। जैसे हमारी कम्पनी के एक मजदूर ने, क्या नाम है उसका बताना जरा!" मजदूरों ने बताया 'समेलाल'। "हां, हमने यहां एक ऐसा माल तैयार किया है जो उन लोगों (दूसरे देशों) के पास भी नहीं है, और अगर है भी तो बहुत महंगा पड़ता है।"

मालिक की यह बात सुनकर एक मजदूर ने जिसका नाम कालू था अपने आगे बैठे मजदूर साथी को पीछे खींचा और उसके कान में धीरे से कहने लगा। "जानते हो यासीन 19-20 साल की नौकरी के बाद भी समेलाल को कितने पैसे मिलते हैं? नई खोज करने के बाद भी, केवल 3500 रु.। और उसके तीन बच्चे हैं। कम्पनी को इतनी ऊंचाई पर पहुंचाने पर भी यह साला उसका नाम तक नहीं जानता। रही इस देश में तरक्की की बात तो सुई से लेकर हवाई जहाज, राकेट, एक से बढ़कर एक खतरनाक हथियार, अनाज, कपड़ा, मोटरगाड़ी, कम्प्यूटर सभी कुछ तो है यहां, फिर कौन-सी तरक्की की कमी रह गई? हां एक तरक्की की कमी रह गई है यहां। वह है हमारी हड्डियां भी बेच खाने की तरक्की। देखो यह हमें कैसे उल्लू बना रहा है।"

मालिक बोलता जा रहा था। "जब वहां मीटिंग में यह सवाल पूछा गया कि किस देश के आदमी सबसे ज्यादा पसन्द है। अमेरिका के लोग कितने लोगों को पसन्द है? कुल 60 हाथ ऊपर उठे। चीन का नाम लिया गया तो लोगों के हाथ ऊपर उठे। जापान का नाम लेने पर 70 हाथ ऊपर उठे। और जब भारत का नाम लिया गया तो पूरे 200 लोगों के हाथ ऊपर थे। जब यह पूछा गया कि भारत के लोग क्यों पसन्द हैं, तो उन्होंने जवाब दिया कि भारत के लोग अपनी पुरानी संस्कृति से जुड़े हुए हैं। अपने बड़ों का आदर करते हैं। अपने सीनियरों के सामने आवाज नहीं उठाते। अपने पुराने संस्कारों को नहीं छोड़ते। इसलिए पसन्द है भारत के लोग। तुम लोगों को भी अपने से ऊपर वाले बॉस का आदर-सम्मान करना चाहिए। इनका कहना तुरन्त करना चाहिए। "और हां 'काम करो, फल की चिन्ता मत करो'। यह तो हमारे प्राचीन ग्रंथों में भी गीता के उपदेश में आता है।"

मालिक की बात सुनकर मजदूर कालू सिंह का चेहरा लाल हो गया। उसने फिर यासीन अली को कंधे पर हाथ रखकर पीछे खींचा और धीरे से परन्तु क्रोधित होकर कहने लगा। "देख रे, ये साला हमें कैसे चक्र में फंसा रहा है। ये चाहता है कि हम पुराने जमाने में जिएं। जबकि जमाना आगे बढ़ रहा है। ये हमें पीछे धकेल रहा है। वहीं जाति-धर्म के चक्र में फंसे रहें, एक-दूसरे को मारते-काटते रहें। और क्या बात कही है इस जहरीले नाग ने? 'कर्म करो, फल की चिन्ता मत करो'। मतलब हम सुबह से शाम तक काम करते रहें। जब शाम को भूख लगे तब ईंट और पत्थर खाकर भूख शांत करें, क्यों? भूख लगे तो रोटी की चिन्ता ही न करें सिर्फ इसके लिए कमाते रहें। चलो साथी इसके मुंह पर थूकेंगे।" लखबीर ने उसे रोक दिया "ठहरो यार अभी इसकी सारी बात ध्यान से सुनो। यह क्या कह रहा है। वे दोनों चुप हो गये। मालिक बोलता ही जा रहा था।

"जब मैं पिछले दिनों चीन गया था तो वहां के मजदूरों का काम देखा। वाह, क्या काम करते हैं वहां के मजूदर! और तुम लोगों से ज्यादा पैसे भी नहीं लेते। लेकिन तुम से ज्यादा मेहनत, सफाई। आठ घण्टे में तुमसे ज्यादा माल तैयार करते हैं। वहां के कानून को तो देखो, क्या कमाल है। जो जवान मजदूर हैं उन्हें 4-5 साल तक तो घर ही नहीं जाना है। शादी के दो साल बाद तक भी नहीं। दो साल तक अपनी पत्नी को भी नहीं मिलना।" यह बात सुनकर बीच में बैठा एक मजदूर हंसने लगा। मालिक उसे घुड़कते हुए बोला, अबे हंस मत, बात हंसने की नहीं है, ध्यान में रखने की है और अपने पर लागू करने की है। ध्यान से सुन। वहां के मजदूरों को 24 घण्टे कम्पनी में ही रहना है। वहीं उनको रहने के लिए कमरे मिले हुए हैं। रात को 10-11 बजने पर खाना खाते हैं। तब जाकर सोते हैं। फिर सुबह उठकर, नहा-धोकर, नाश्ता करके ड्‌यूटी पर पहुंच जाते हैं। अगर वह इन 4-5 सालों में घर जायेगा तो नौकरी छोड़नी पड़ेगी, दूसरी जगह मिलेगी भी नहीं। "वहां कोई हड़ताल भी नहीं कर सकता। जो कानून तोड़ता है उसे गोली मार दी जाती है। और तुम, तुम तो घर भी जाते हो, यहां से निकालोगे तो दूसरी जगह नौकरी भी मिल जायेगी। अपना रोजगार भी कर सकते हो। परन्तु वहां ऐसा नहीं है। हां तुम तो कानून भी तोड़ लेते हो, तुम्हें कोई डंडा भी नहीं मारता। हड़ताल भी कर लेते हो, नेता बनकर भी आगे आते हो! जैसे यहां पिछले दिनों कुछ गलत तरीके के आदमी नेता बनकर आये थे। बहका लिया था तुम लोगों को। तुम्हें गलत लीडरशिप मिली थी। लेकिन उसका नतीजा क्या निकला? उन्हें बाहर कर दिया गया। उनका साथ देने वालों को भी।"

उसके चेहरे पर अहंकार था। दृढ़ता से कहने लगा, "अब की बार फिर कोई नेता बनकर आया तो वह भी बाहर मिलेगा हूं-हूं-हूं-हूं-हूं।" वह व्यंग्य करके हंसा और जोर का झटका धीरे से मार गया। अपनी खतरनाक बात को धीरे से समझा गया।

"और हां, तुम्हें अब अच्छे नेता मिले हैं, तुम्हारे नये नेता चीफ साहब, जी एम साहब तुम्हारे अच्छे लीडर हैं। तुमसे सही ढंग से काम करवाते हैं। तुम्हें भी खुद अपने आप मेहनत करनी चाहिए।" बस मुझे यही कहना था!

फैक्ट्री मालिक की बातें सुनकर कालू सिंह को गुस्से के मारे चैन से बैठा नहीं जा रहा था। उसने लखबीर सिंह को फिर खींचा और बोला "चल ओए, वह साला हमें कमजोर समझता है। उसको दो हाथ दिखा ही दें। उसे अभी छत से नीचे फेंकेंगे।" वह उठने की कोशिश करने लगा। परन्तु यासीन अली ने उसे रोक लिया। "नहीं कालू उसे पीटने से या मारने से क्या होगा? हमारी गुलामी थोड़े ही खत्म हो जायेगी और फिर यह समस्या हम दोनों की ही नहीं है। सभी मजदूरों की है। यासीन कुछ जागरूक मजदूर लग रहा था। "अरे, हम सभी को इसके बारे में सोचना होगा। फिर से संगठित होना होगा।" कालू बोलने लगा। "लेकिन संगठित होगा कौन? सब तो अलग-थलग पड़ गये हैं। पिछली हार के कारण।" नहीं साथी वह हमारी हार नहीं हुई है। बल्कि कुछ समय के लिए बीमार हुए हैं। हार तो होती रहती है। हार होकर ही जीत होती है। जानते हो **महमूद गजनवी** ने भारत पर 17 बार आक्रमण किया था। 17 बार हारकर 18वीं बार जीता था। इसलिए हमें भी इस बात से सबक लेना होगा। अबकी बार बड़ी सावधानी बरतनी पड़ेगी। सभी मजदूरों को फिर से इकट्‌ठा होना ही पड़ेगा।" वे दोनों फिर चुप होकर सुनने लगे। मालिक अभी बोलता ही जा रहा था

"अब कुछ मजदूरों को हमने इनाम देने हैं।" यह सुनते ही मोटा स्टेज संचालक अफ़सर आगे आया। बारी-बारी से मजदूरों के नाम बोलने लगा। ऊपर के स्टाफ की एक औरत पहले से इनाम के पैकेट लिए तैयार खड़ी थी। उसने एक-एक करके मालिक को इनाम के पैकेट दिये और मालिक मजदूरों के हाथ में देता गया। जिन मजदूरों की 20 साल की नौकरी हो गई थी, उनको केवल 4000 रु., 15 साल वाले को 3000 रु. और 10 साल वाले को 2000 रु. दिये गये। इसके बाद जो मजदूर स्टार चुने गये थे उन्हें 500 रुपये जिसकी पूरे साल की हाजिरी सबसे अधिक थी उसे भी 5000 रु. दिये गये।

इनाम बांटते समय मजदूरों को तालियां बजाने का इशारा किया गयां मजदूरों ने दो-चार बार धीरे-धीरे तालियां बजाईं। फिर बंद कर दीं। अब केवल मालिक के एक लड़के की ताली बजती सुनाई दे रही थी।

"आज का प्रोग्राम अच्छा रहा" मालिक ने बोलना शुरू किया। "अब सभी मेरे साथ बोलेंगे, (राधे-राधे, राधे-राधे, राधे-राधे)! मुझे पता है, अब तुम्हें चाय का बहुत इंतजार हो रहा है। जाओ अब बैठे क्यों हो, कहीं चाय ठण्डी न हो जाये।"

मालिक ने जाते-जाते मजदूरों पर एक तमाचा और जड़ दिया। जैसे मजदूरों ने कभी चाय देखी ही न हो।

फ़लस्तीनी कविता

एक दिवालिए की रिपोर्ट

समीह अल-कासिम

अगर मुझे अपनी रोटी छोड़नी पड़े
अगर मुझे अपनी कमीज
और अपना बिछौना बेचना पड़े
अगर मुझे पत्थर तोड़ने का काम
करना पड़े
या कुली का
या मेहतर का
अगर मुझे तुम्हारा गोदाम साफ करना पड़े
या गोबर से खाना ढूंढ़ना पड़े
या भूखे रहना पड़े
और खामोश
इनसानियत के दुश्मन
मैं समझौता नहीं करूंगा
आखिर तक मैं लड़ूंगा

जाओ मेरी जमीन का
आखिरी टुकड़ा भी चुरा लो
जेल की कोठरी में
मेरी जवानी झोंक दो
मेरी विरासत लूट लो
मेरी किताबें जला दो
मेरी थाली में अपने कुत्तों को खिलाओ
जाओ मेरे गांव की छतों पर
अपने आतंक के जाल फैला दो
इंसानियत के दुश्मन
मैं समझौता नहीं करूंगा
और आखिर तक मैं लड़ूंगा

अगर तुम मेरी आंखों में
सारी मोमबत्तियाँ पिघला दो
अगर तुम मेरे होंठों के
हर बोसे को जमा दो
अगर तुम मेरे माहौल को
गालियों से भर दो
या मेरे दुखों को दबा दो
मेरे साथ जालसाजी करो
मेरे बच्चों के चेहरे से हंसी उड़ा दो
और मेरी आंखों में अपमान की पीड़ा भर दो
इंसानियत के दुश्मन
मैं समझौता नहीं करूंगा
और आखिर तक मैं लड़ूंगा
मैं लड़ूंगा

(कविता का एक अंश)

अनुवाद : रामकृष्ण पाण्डेय

उ.प्र. में सरकार बदली पर पुलिसिया राज बदस्तूर कायम है!

भवानीपुर कांड : सीआईडी जांच में खाकी वर्दी वाले हत्यारे साफ बचे

कार्यालय संवाददाता

लखनऊ। सीआईडी जांच में मिर्जापुर जिले के उन खाकी वर्दी वाले हत्यारों को बेगुनाह करार दे दिया गया है जिन्होंने आज से लगभग ढाई साल पहले भवानीपुर गांव में दिनदहाड़े 16 नौजवानों की फर्जी मुठभेड़ में हत्या कर दी थी। इन हत्यारों की बेगुनाही के लिए सीआईडी को सिर्फ यह साबित करना पड़ा कि मारे गये नौजवान नक्सली थे। सीआईडी ने शासन को सौंपी गयी इस रिपोर्ट में कहा है कि दिन में हुई इस मुठभेड़ पर सवाल नहीं उठाया जा सकता।

पिछले साल के दिसम्बर माह के आखिरी हफ्ते में शासन को सौंपी गयी इस रिपोर्ट के तमाम बुर्जुआ अखबारों में बीच के पन्नों पर खो गयी। बहुत कम लोगों की निगाह इस पर गयी होगी। जबकि आज से ढाई साल पहले जब यह जघन्य हत्याकाण्ड हुआ था तो व्यापक जनविरोध को देखते हुए मीडिया ने इस घटना को अहमियत के साथ छापा था।

मिर्जापुर जिले के मड़िहान थाना क्षेत्र के भवानीपुर गांव में दिनदहाड़े यह फर्जी मुठभेड़ 9 मार्च 2001 को हुई थी। उस दिन इस गांव के लालबहादुर हरिजन के घर बहूभोज था। मड़िहान थाने की पुलिस ने कथित रूप से इस पारिवारिक आयोजन में नक्सलियों के शामिल होने की सूचना मिलने पर घेरेबन्दी कर 16 नौजवानों की ठंडी हत्या कर दी थी। बाद में इसे नक्सलियों के साथ मुठभेड़ के रूप में प्रचारित किया गया। लेकिन विभिन्न जनतांत्रिक अधिकार संगठनों और क्रान्तिकारी जनसंगठनों के व्यापक विरोध के कारण प्रदेश सरकार को सीआईडी जांच बिठानी पड़ गयी थी।

घटना की सूचना मिलने पर अगले दिन तत्कालीन मुख्यमंत्री राजनाथ सिंह अपने लाव-लश्कर समेत भवानीपुर गांव पहुंचे थे और मुठभेड़ में शामिल सभी पुलिसकर्मियों को आउट आफ टर्न प्रोन्नति की घोषणा कर दी थी। और अब सीआईडी ने इन पुलिसकर्मियों को क्लीनचिट दे दी है।

सीआईडी की इस रिपोर्ट ने उन सभी स्वतंत्र जांच रिपोर्टों को झूठा करार दे दिया है जिन्होंने इस सच्चाई की तस्दीक की थी कि पुलिस वालों ने दिनदहाड़े उन नौजवानों को भून डाला और बाद में उसे नक्सलियों से मुठभेड़ करार दिया। पीयूडीआर ने भी अपनी रिपोर्ट में यही नतीजा निकाला था। लेकिन उत्तर प्रदेश में जारी पुलिसिया राज ऐसी सारी रिपोर्टों को पचा जाता है और डकार भी नहीं लेता। प्रदेश में पिछले तीन सालों में तीन सरकारें बदल चुकी हैं लेकिन पुलिसिया राज बदस्तूर कायम है। प्रदेश में पुलिस के जंगलराज की सच्चाई खुद प्रदेश के मानवाधिकार आयोग के अध्यक्ष ए पी मिश्र ने पिछले दिनों एक बयान में स्वीकार की। उन्होंने स्वीकार किया कि मानवाधिकार उल्लंघन के मामले में उत्तर प्रदेश पहले नम्बर पर है। उन्होंने आगे कहा कि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को साल भर में एक लाख से ऊपर शिकायतें मिलती हैं, जिनमें लगभग पचास हजार उत्तर प्रदेश से होती हैं।

उत्तर प्रदेश में हालात कितने संगीन हैं, इसका अनुमान केवल इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि अकेले सोनभद्र जिले में पिछले साल 28 लोगों को आतंकवाद निरोधक कानून (पोटा) के तहत गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया था। इन पर नक्सली गतिविधियों में शरीक होने का आरोप लगाया गया था और नक्सलवाद विरोधी अभियान के नाम पर इन्हें गिरफ्तार किया गया था। इनमें से कई की उम्र बीस साल से कम थी और सब के सब गरीब दलित और आदिवासी थे। हालांकि इस साल के शुरू में इन पर से पोटा हटा लिया गया पर वे अभी भी अन्य आपराधिक मामलों में जेल में बन्द हैं। इस मामले में एक और चौंकाने वाला तथ्य यह है कि इनमें से चार लोगों को पुलिस पिछली 21 अप्रैल को फर्जी मुठभेड़ में मार चुकी है।

उत्तर प्रदेश में नक्सलवाद को खत्म करने के नाम पर पूर्व मुख्यमंत्री राजनाथ सिंह के समय से ही पुलिसिया मुहिम जारी है। राजनाथ सरकार ने राज्य के तीन पूर्वी जिलों-चन्दौली, मिर्जापुर और सोनभद्र को नक्सलवाद प्रभावित घोषित कर रखा था। मई 2002 में मायावती के नेतृत्व में उत्तर प्रदेश में बसपा-भाजपा गठबंधन सरकार बनी तो तीन अन्य पूर्वी जिलों-गाजीपुर, मऊ और बलिया को भी इस सूची में शामिल कर लिया गया। अब राज्य में समाजवाद के ढिंढोरची मुलायम सिंह यादव की सरकार है लेकिन हालात जस के तस बने हुए हैं। सरकार का 'नक्सवाद' विरोधी अभियान जारी है। पुलिस द्वारा फर्जी मुठभेड़ में लोगों को मार डालने और दूसरे तरह की गम्भीर पुलिस ज्यादतियों की खबरें अक्सर आती रहती हैं।

देश में भूमण्डलीकरण की नीतियों से मेहनतकश अवाम की जिन्दगी में कोहराम मचा हुआ है। हालत यह है कि एक गरीब रिक्शा चालक भूख मिटाने के लिए अपनी दस माह की बच्ची को दस रुपये में बेचने पर मजबूर हो जाता है। लेकिन सरकारें भुखमरी मिटाने के बजाय जिन्दा रहने के लिए उठी आवाजों को कुचलने के लिए अपनी दमन-मशीनरी को अधिक से अधिक चाक-चौबन्द करती जा रही हैं।

बीते साल दिसम्बर के पहले हफ्ते में उपप्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी ने, जो गृहमंत्री भी हैं, लोकसभा को बताया कि कई राज्यों में 'नक्सलवादी संकट' का मुकाबला करने के मकसद से देश में पुलिस के आधुनिकीकरण के लिए हर साल दस अरब रुपये की रकम दी जायेगी।

पुलिस और अर्द्धसैनिक बलों का आधुनिकीकरण करने, नयी-नयी जेलों को बनाने, खुफिया तंत्र को अधिकाधिक हाईटेक बनाने आदि की कवायदें भविष्य में उठ खड़े होने वाले जनसंघर्षों से निबटने की तैयारियां हैं। जाहिर है हुक्मरान भयभीत हैं। बहरहाल वे लाख कोशिशें कर लें लेकिन वे इतिहास के इस सच को नहीं बदल सकते कि दमन-उत्पीड़न के किसी भी हथकण्डे से जनता की आजादी और एक इंसानी जिन्दगी जीने की चाहतों को नहीं कुचला जा सकता।

मध्य प्रदेश में प्रगतिशील पत्रिकाओं पर सरकारी डण्डा

मेहनतकश अवाम का एकजुट संघर्ष ही मनबढ़ फासिस्ट ताकतों का माकूल जवाब हो सकता है!

कार्यालय संवाददाता

लखनऊ। जीवन के सभी ऐशो-आराम का जमकर भोग करने वाली तथाकथित साध्वी उमा भारती की भगवा सरकार ने मध्यप्रदश में सत्ता संभालते ही फासिस्ट तेवर दिखाने शुरू कर दिये हैं।

कांगेसी शासन के दस साल के निकम्मेपन से उकताई जनता की नाराजगी का फायदा उठाकर और सड़कों और बिजली की खस्ता हालत का मुद्दा उछालकर सत्ता में आई भाजपा ने पिछले दो महीने में हिन्दूवादी भावनाएं उभाड़ने की कार्रवाइयों के अलावा और कुछ नहीं किया है। मुख्यमंत्री को गोवंश और गोशालाओं से ऊपर उठकर इंसानों की सुध लेने की फुरसत ही नहीं है।

दूसरी ओर साध्वी के आशीर्वाद से उनके मंत्रियों ने संघ परिवार की किसी भी आलोचना का मुंह बन्द करने के लिए सरकारी डण्डा भांजना शुरू कर दिया है। पिछले महीने मध्यप्रदेश के संस्कृति मंत्री अनूप मिश्र, जो प्रधानमंत्री के भांजे भी हैं, ने हिन्दी की दो प्रगतिशील पत्रिकाओं 'उद्भावना' और 'समयान्तर' पर रोक लगाने की कार्रवाई शुरू कर दी। सारा मामला साजिशाना ढंग से अंजाम दिया गया।

मध्यप्रदेश साहित्य परिषद और भारत भवन के स्टाल पर बिक रही इन पत्रिकाओं को आरएसएस का एक कार्यकर्ता खरीदकर मंत्री के पास ले गया। इसके बाद मंत्री ने फौरन इन स्टालों से इन पत्रिकाओं की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगा दिया और परिषद के सचिव पूर्णचन्द रथ और भारत भवन के अधिकारी मदन सोनी को निलम्बित करने का आदेश जारी कर दिया। ये दोनों हिन्दी के प्रतिष्ठित लेखक हैं।

इन पत्रिकाओं का गुनाह यही था कि इनमें संघ परिवार की साम्प्रदायिक राजनीति की आलोचना की जाती रही है। मंत्री ने यह भी दंभपूर्ण घोषणा की कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और भाजपा की आलोचना करने वाली किसी भी पुस्तक या पत्रिका को वह राज्य सरकार की संस्थाओं से बिकने नहीं देंगे। एक कदम आगे बढ़कर उन्होंने यह भी कह डाला कि सरकार प्रदेश में इन पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने पर भी विचार कर सकती है।

फासिस्ट सत्ताएं कभी भी आलोचना बर्दाश्त नहीं कर सकती हैं क्योंकि सारे फासिस्ट भीतर से कायर होते हैं। खासकर कला-साहित्य-संस्कृति से तो उनकी जानी दुश्मनी है। हिटलर का प्रचार मंत्री गोयबेल्स कहता था, ''जब मैं संस्कृति शब्द सुनता हूं तो मेरा हाथ अपनी पिस्तौल पर चला जाता है।'' हिटलर की भारतीय औलादें भी अपने बाप-दादों की इस गौरवशाली परम्परा को आगे बढ़ा रही हैं।

आज सवाल यह नहीं है कि साम्प्रदायिक ताकतें क्या और क्यों कर रही हैं। सवाल यह है कि उनका जवाब कैसे दिया जाये। वे अपने काम में बदस्तूर लगी हुई है। लेकिन प्रतिरोध की ताकतें कुछ रस्मी कार्रवाइयों से आगे नहीं बढ़ पा रही हैं। कुछ अखबारी बयान, कुछ निंदा प्रस्ताव, कुछेक धरनों और गोष्ठियों से भगवा ब्रिगेड को ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। जब तक साम्प्रदायिकता के खिलाफ लड़ाई को आम मेहनतकश जनता के बीच नहीं ले जाया जायेगा, तब तक भगवा आक्रमण को असरदार जवाब नहीं दिया जा सकेगा। मध्यप्रदेश में नये फासिस्ट हमले ने एक बार फिर यह चुनौती हमारे सामने रख दी है।

पंतनगर के मजदूर संघर्ष की राह पर

प्रशासन दमन पर आमादा

बिगुल संवाददाता

पंतनगर (ऊधमसिंह नगर)। पंतनगर कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के मजदूर यहां की तीन प्रमुख यूनियनों-पंतनगर कर्मचारी संगठन, श्रमिक कल्याण संघ व सफाई मजदूर कांग्रेस के साझा मंच 'ट्रेड यूनियन संयुक्त मोर्चा' के नेतृत्व में आखिरकार संघर्ष की राह पर उतर पड़े हैं।

विश्वविद्यालय की 3200 एकड़ बेशकीमती जमीन पर उद्योग बसाकर यहां के मजदूरों के भविष्य को अंधकारमय करने की सरकारी योजना, ठेकाकरण लागू होने के विरोध सहित फार्म मजदूरों को विश्वविद्यालय कर्मचारियों के समान वेतन व सुविधाओं के पुराने आश्वासनों को पूरा करने, 240 दिन पूरा कर चुके दैनिक वेतनभोगी कर्मचारियों व मृतक आश्रित मस्टर लिस्टेड कर्मचारियों के नियमितीकरण सहित 14 सूत्री मांगों पर जब कोई भी समाधान नहीं निकला तो अन्ततः मजदूरों को संघर्ष का रास्ता अपनाना पड़ा।

मोर्चा के नेतृत्व में 27 जनवरी से मजदूरों ने अपना क्रमिक अनशन, धरना-प्रदर्शनों शुरू कर दिया और मांगें न माने जाने पर हड़ताल पर जाने का ऐलान कर दिया है। उधर वि.वि. प्रशासन ने राज्यपाल से छह माह तक हड़ताल पर रोक का आदेश ले लिया है। प्रशासन आंदोलन को कुचलने के लिए पूरी तरह से मुस्तैद है। जिला व पुलिस प्रशासन उसके साथ है। उसने कोर्ट से परिसर में धरना-प्रदर्शन पर रोक का स्थगनादेश पहले से ले रखा है और आंदोलन शुरू होते ही नेताओं के खिलाफ न्यायालय की अवमानना का मुकदमा भी ठोंक दिया है।

प्रशासन मजदूरों को गुमराह करने का असफल प्रयास भी कर रहा है। यहां की स्थिति एक बार फिर 1978 के ऐतिहासिक संघर्ष की याद दिला रही है और दमन के वैसे ही मंजर का अहसास करा रही है। निश्चित रूप से परिस्थितियां पहले से काफी भिन्न हैं। लेकिन इतिहास की यह एक कड़वी सच्चाई है कि दमन का पाटा जितना तेज चलता है मजदूरों का संघर्ष उतना ही निखरता जाता है।

बहरहाल, यहां संघर्ष की जो नयी शुरुआत हुई है उससे मजदूरों को काफी उम्मीदें हैं।

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वानी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंगः कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
सम्पादकः **डा. दूधनाथ, मुकुल** ● सम्पादकीय पताः **69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006** ● सम्पादकीय उपकार्यालयः जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ